यादों के झरोखों में बनारस एवं गया

बनारस- गया यात्रा : कुछ स्मृतियां

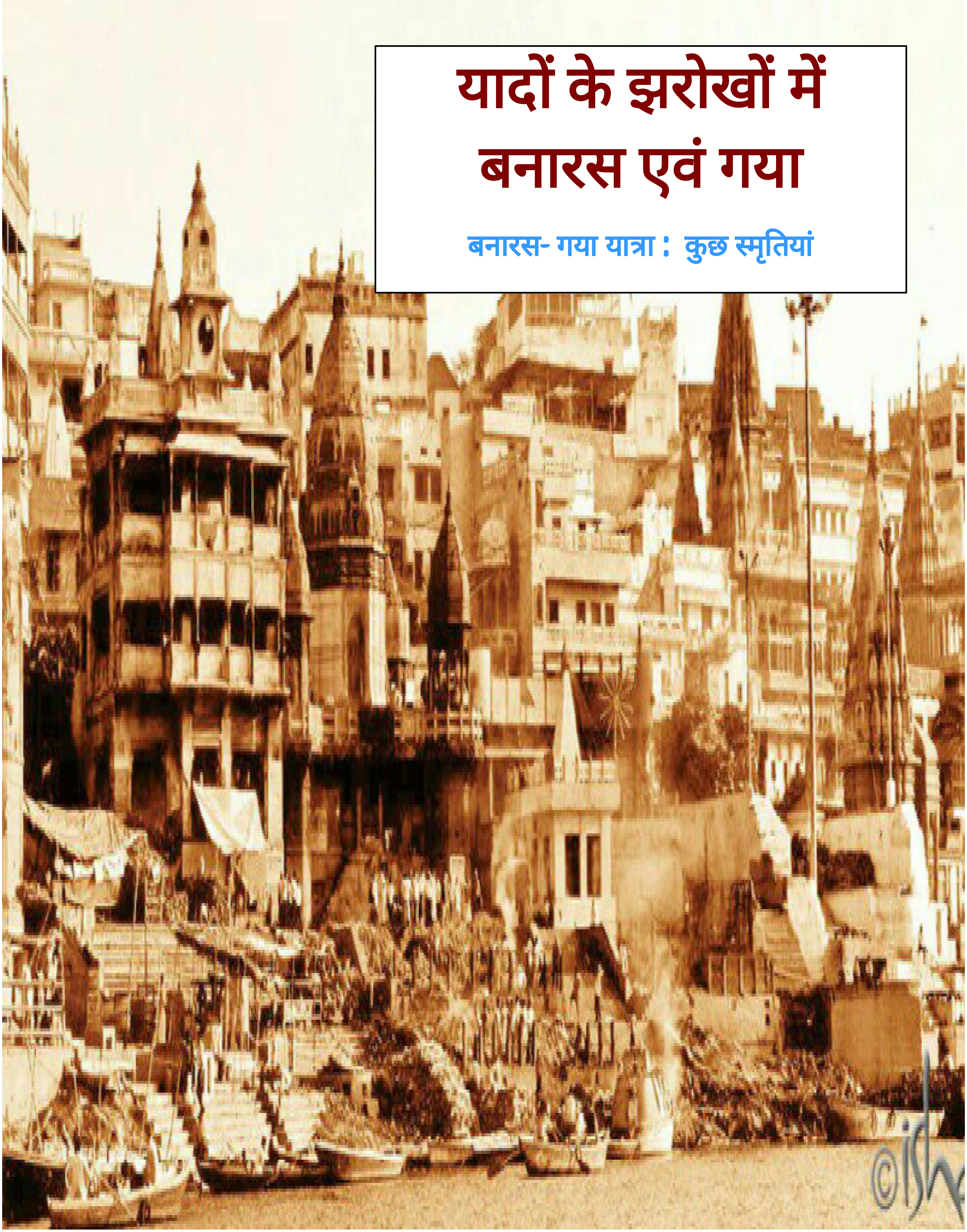

गोवा विश्वविद्यालय

तालेगांव गोवा

हिंदी विभाग

हिंदी प्रदेशों में भ्रमण

विषय: " यादों के झरोखों में बनारस एवं गया"

(रिपोर्ट)

नाम: पूनम शर्मा

कक्षा: एम ए द्वितीय वर्ष

अनुक्रमांक: 2018 039

प्रस्तावना

मनुष्य यह एक ऐसा प्राणी है, जिसे घूमना फिरना, नई नई जगहों पर जाना बहुत पसंद होता है। नए-नए अनुभव और नई जगह की तलाश करना अपने आप में एक बहुत ही रोमांचक अनुभव होता है। यही कारण है कि मनुष्य नई नई जगहो और दृश्यो की खोज में रहता है। जिससे उसे नई-नई जानकारियों मिले, नए-नए अनुभव मिले। यात्रा करना अपने आपने एक ऐसा ही सुखद अनुभव है। राहुल जी “घुमक्कड़ शास्त्र” में कहते हैं “घुमक्कड़ी सर्वश्रेष्ठ है। घुमक्कड़ी एक रस है जो कला से किसी भी तरह कम नहीं है”। इस वर्ष गोवा विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग ने विद्यार्थियों की इसी रुचि को ध्यान में रखकर “हिंदी प्रदेशों में भ्रमण" इस विषय को पाठ्यक्रम में शामिल किया। जिससे पश्चिम में बसे गोवा राज्य के विद्यार्थियों को उत्तर भारत की जानकारी हो और वहां की संस्कृति और भाषा का परिचय हो। यह विषय एक ऐसा ही उपक्रम है, जिसके माध्यम से हमें विश्वविद्यालय के दैनंदिन व्यस्त लेक्चर से कुछ दिनों छुटकारा मिला और कुछ नया सीखने का अवसर भी मिला। इस विषय का चयन तो हमने कर लिया किंतु जाया कहां जाए इसका फैसला करना एक मुश्किल कार्य था क्योंकि इस विषय के अंतर्गत हमें तीन विकल्प दिए गए थे और ये तीनों ही विकल्प एक से बढ़कर एक थे और हर एक की अपनी एक अलग विशेषता थी। हमें तीनों स्थानों में से किसी एक स्थान का चयन करना था, परंतु यह आसान नहीं था क्योंकि ऐसे समय में सबका एकमत होना बहुत ही बड़ी बात थी। यही कारण है की स्थानों का चुनाव करने के लिए हमने चर्चाएं की। हर किसी का अपना एक अलग मत, उनका एक अलग तर्क था। इसलिए किसी एक स्थान को चुनना कठिन हो गया और अंत में आकर हमें शिक्षकों की मदद से सर्व सहमति से एक स्थल को निश्चित किया। वह था बनारस जिस पर सभी एकमत होकर सहमत हो गए।

किसी भी यात्रा के पूर्व तैयारी आवश्यक होती है। उसी प्रकार यहां पर भी हुआ। तय हुआ कि हम रेल से प्रवास करेंगे और दिसंबर महीने के अंत में हमारी यात्रा होगी, किंतु टिकटों की व्यवस्था ना हो पाने के कारण हमारी यात्रा मैं विलंब हो गया। टिकटों के लिए हमारे विभाग के सह प्राध्यापक दीपक बरक ने बहुत मेहनत की, घंटों कतारों में खड़े होकर कई बार यहां वहां के चक्कर काटकर किसी तरह हमारे टिकट बुक कराए। जिसमें हमें विश्वविद्यालय के कुलपति का आज्ञा पत्र मिलने से हमें रेल के टिकटों में कुछ छूट भी मिली। इस तरह यात्रा दिसंबर की जगह फरवरी में निश्चित हुई और समय तय हुआ 7फरवरी से 17 फरवरी तक। यात्रा में गोवा विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग के 52 विद्यार्थी और 3 शिक्षकों का समूह था। यात्रा में हमारे साथ विभागाध्यक्ष डॉ. वृषाली मांद्रेकर , सह प्राध्यापक दीपक बरक और अन्य एक विद्यालय की प्राध्यापिका मैम मैगड़ा मौजूद थी।

प्रस्तुत स्वाध्याय में बनारस, गया और पटना की यात्रा से जुड़े अनुभवों का विवरण दिया हुआ है। दस दिनों की इस यात्रा में आई कठिनाइयों और निजी अनुभवों का लेखा जोखा दिया गया है। इस स्वाध्याय के माध्यम से इन सभी क्षणों को एक बार फिर से जीने का प्रयास किया गया है। इस यात्रा के लिए मैं गोवा विश्वविद्यालय के कुलपति, हिंदी विभाग और हमारी विभागाध्यक्ष डॉ. वृषाली मांद्रेकर , सह प्राध्यापक दीपक बरक का आभार मानती हूँ कि

उन्होंने मुझे इस विषय को चुनने की अनुमति दी। इस शैक्षणिक यात्रा को सफल बनाने के लिए अथक परिश्रम किया और इस यात्रा को सुनियोजित ढंग से पूरा करने में मदत की। यात्रा के दौरान हमारा ध्यान रखा। इसलिए मैं इस यात्रा सफल बनाने में प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से सहभागी सभी के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करती हूं । इस यात्रा को कभी भुलाया नहीं जा सकता।

रेल की यात्रा

रेल से यात्रा का प्रारंभ हुआ दिनांक 7 फरवरी को सुबह 9:15 बजे मांडवी एक्सप्रेस से। हमने गोवा से दादर के बीच का सफर प्रारंभ किया। सुबह का मौसम बहुत सुहावना था। ठंडी ठंडी हवा चल रही थी। बीच-बीच में ट्रेन की सीटी की आवाज, चाय और मूंगफली बेचने वालों की आवाज से एहसास हो रहा था कि हम सच में यात्रा प्रारंभ कर चुके हैं। मेरे कक्षा की ज्यादातर विद्यार्थियों की सीटें एक ही डिब्बे में थी । हंसते गाते हंसी मजाक करते ना जाने कितने अन्य अनुभव के साथ रात 9:15 बजे हम दादर पहुंच गए । पहुंचते ही एक अलग ही दृश्य मेरे सामने था । रेलवे स्टेशन पर ही मुंबई के व्यस्त जीवन का एहसास हमें हो चुका था । मुंबई की लाइफ लाइन कहीं जाने वाली मुंबई लोकल ट्रेन के बारे में अभी तक हमने जो सुना था । वह प्रत्यक्ष हमारी आंखों के सामने थे । मुंबई लोकल ट्रेन मुंबई की जिंदगी की तरह इतनी तेज गति से भागती है, कि कभी रूकती ही नहीं । बस स्टेशन आने पर अपनी गति थोड़ी धीमी कर देती है और कब आदमी उस पर चढ जाते हैं । इसका एहसास तक नहीं होता । इस धीमी गति में जो चढ़ गया वह चढ़ गया । जो पीछे छूट गया वह छूट गया। यह कोई प्रतियोगिता सी प्रतीत हो रही थी जिसमें हर कोई विजयी होना चाहता है ।

लोकल ट्रेन में बैठने का मेरा पहला ही अनुभव था इसलिए ट्रेन की धड़कन के साथ दिल में डर भी लग रहा था । दादर से लोकल लेकर हमें कुर्ला जाना था और वहां से चलते हुए ‘लोकमान्य तिलक टर्मिनल’ पहुंचना था । जहां हमें अगले दिन बनारस के लिए ट्रेन लेनी थी । हमने कुर्ला तक जाने के लिए लोकल लेने का फैसला किया। हम किसी तरह डरते डरते ट्रेन पर चढ़े । इसमें चढ़ते वक्त हमारी एक साथी और हमारी विभाग अध्यक्ष डॉ. वृषाली मांद्रेकर पीछे छूट गई और किसी तरह दूसरी लोकल लेकर कुर्ला स्टेशन पहुंची। इस समय रात के लगभग 11 बज चुके थे परंतु कुर्ला स्टेशन पर ऐसी भीड़ लगी हुई थी जैसे कोई सुबह का वक्त हो । इतनी रात में भी पैदल चलते हुए हमने "लोकमान्य तिलक टर्मिनस" (एल. टी. टी.) जाने का फैसला किया और किसी तरह अपना और सामान का बोझ उठाते हुए हम चल पड़े । रास्ते में राहुल जी का “घुमक्कड़ शास्त्र" में दिया हुआ एक सुझाव याद आया । “यात्रा के समय जितना हो सके उतना कम सामान लेना चाहिए” लेकिन हमने तो अपने झोले कपड़ों और सामान से भर रखे थे और उन्हें लेकर चलना बहुत मुश्किल हो रहा था। कुछ मीटर का फासला बहुत लंबा लग रहा था और शरीर भी जवाब दे चुका था । वही पेट में भी चूहे कूद रहे थे। किसी तरह हम एल. टी. टी. पहुंचे और वहां पहुंचकर चैन की सांस ली । जहां जगह मिली वहां बैठ गए क्योंकि हमें पूरी रात स्टेशन पर बिता कर अगले दिन दोपहर 1:00 बजे बनारस के लिए रवाना होना था ।

वहां बैठकर घर से लाया हुआ बचा कुचा खाना खाया। कुछ देर वहीं आराम करने के बाद आसपास स्टेशन को देखा क्योंकि यह एक भव्य और सुंदर रेलवे स्टेशन था । स्टेशन पर पत्थरों को कुरेद कर दीवार पर एक सुंदर चित्र बनाया गया था । जिसमें महाराष्ट्रीय संस्कृति की स्पष्ट झलक दिखाई दे रही थी । आती-जाती रेलों की आवाजें रेलवे स्टेशन पर चाय वालों की आवाज यात्रियों की चहल-पहल कानों में गूंज रही थी, किंतु आंखें खुलने को तैयार

ही नहीं थी । बार-बार वही बैठे-बैठे झपकी लगने लगी किंतु जैसे ही नींद लगती स्टेशन के कर्मचारी की लाठी बजने लगती है और वह हमें बार-बार उठकर बैठने की हिदायत देता, परंतु हम आदत से मजबूर बार-बार नींद के सामने अपने घुटने टेक देते और वो बार-बार उठाके चले जाता क्योंकि स्टेशन पर यात्रियों के सोने की मनाई थी इसका कारण था जिससे यात्री अपने सामान और अपनी रक्षा स्वयं कर सकें । नींद से आंखें बोझिल हो रही थी परंतु हमने फैसला किया की उठकर बैठा जाए ।

रेलवे स्टेशन की बेंच पर बैठे बैठे सामने घड़ी की तरफ टकटकी लगाए देख रहे थे । ख्याल आया कि आज समय अपनी गति से कुछ धीमा भाग रहा है। अन्य रात को जब आंख लगती है और सुबह कब हो जाती इसका अंदाजा भी नहीं होता, किंतु आज की रात समाप्त होने का नाम नहीं ले रही थी । धीरे-धीरे घड़ी में एक बज गया तभी एक लड़की ने वहां प्रवेश किया। बिखरे बाल और गंदे कपड़े पहने वह लड़की बहुत डरावनी दिख रही थी । स्टेशन पर पहुंच कर वह अजब-अजब सी हरकतें करनी लगी । आसपास के लोगों को देखकर अचानक जोर जोर से हंसना । अपने-आपसे बातें करना । कभी किसी खंभे पर चढ़ना । कभी चिल्लाना और कभी स्वयं थूककर उसे अपने पैरों से लीपना । यह सब देख कर घिन आ रही थी । उस लड़की की मानसिक हालत शायद ठीक नहीं थी । वह लड़की रातभर हमारे इर्द-गिर्द घूमती रही । उसके चेहरे को देखकर अजब सा डर लग रहा था और उसकी हालत पर दया भी आ रही थी । क्या हुआ होगा इस लड़की के साथ, कि इसकी हालत ऐसे हो गई यह सोच कर मन दुखी हो रहा था । अचानक वह लड़की उसी बेंच पर आकर बैठ गई जिस पर हम लड़कियां बैठी हुई थी। हमने अपना स्थान बदल दिया और हमारे प्राध्यापक वहां जाकर बैठ गए किंतु धीरे-धीरे लड़की ने पूरी बेंच पर अपना कब्जा कर लिया । वह हमें और हमारे सामान को घूर घूर कर देख रही थी । इससे उसके ऊपर संदेह हो रहा था कि कहीं वह लड़की कोई चोर तो नहीं**?** एक बार तो उस लड़की ने हमारे प्राध्यापक से बात करने का भी प्रयास किया । उस लड़की ने प्लैटफ़ार्म पर सबका ध्यान केन्द्रित किया हुआ था। और उसीके करण हमारा मनोरंजन हो रहा था। उसकी हरकतों से हमारी नींद भी उड़ गई थी। हमने दो बार स्टेशन मास्टर को भी बुलाया ताकि वे उस लड़की को वहाँ से हटा सकें, किन्तु कोई उपयोग नहीं हुआ। उन्होंने उसे वहाँ से नहीं उठाया। धीरे-धीरे उसकी इन्हीं हरकतों के बीच सुबह हो गयी और हमनें मुंह हाथ धोकर चाय नाश्ता किया। आसपास के परिसर में घूमने के बाद हम ट्रेन आने की प्रतीक्षा करने लगे।

एक बजे जैसे ही हमारी ट्रेन आई तो हम सब उसपर सवार हुए। सभी लोगों को आलस चढ़ गया था इसलिए जल्दी से भोजन कर हम सोने चले गए क्योंकि रात भर की नींद की भरपाई जो करनी थी। इसलिए ट्रेन की खिड़की से झाँकने का भी प्रयास नहीं किया। शाम को जब सुस्ती खत्म हुई तब फिर खिड़की से झांक कर देखा तो सूर्यास्त होनेवाला था। ट्रेन की खिड़की से सूर्यास्त के अलग ही नजारा देखने को मिला।था। आकाश में लालिमा फैली हुई थी और धीरे-धीरे वह लालिमा समाप्त होते होते अंधेरा लहराने लगा। धीरे-धीरे हम महाराष्ट्र की सीमा पार कर मध्यप्रदेश की सीमा में दाखिल हुए। इसी के साथ हमने मौसम में भी परिवर्तन महसूस किया। अगली सुबह जब हम सागर तक पहुंचे तो ठंड के मारे मानो हमारी कुल्फी जम रही थी। पारा सात डिग्री से नीचे था। किन्तु धीरे-धीरे ठंड

बढ़ गयी और हम सफर का मज़ा उठाने लगे। खिड़की से बाहर झांक कर देखा तो लोग खेतों में और मैदानों में नित्य क्रिया कर रहे थे और मोदी जी के स्वच्छता अभियान की धज्जियां उड़ा रहे थे । शहर चाहे कोई भी हो किंतु भूमि एक जैसी ही होती है। वही जमीन, वही आसमान परंतु फर्क सिर्फ इतना था की यहां हमें सरसों और गेहूं की खेती ज्यादा दिखाई दे रही थी। सरसों के पीले पीले खेत सूर्य की पहली किरणों में और भी सुंदर दिखाई दे रहे थे ।

ट्रेन से सफर करने का अपना ही एक अलग मज़ा होता है। कहीं चायवाले के 'चाय गरमा-गरम चाय' की पुकार तो कहीं चना-गरम-चना, ऐसे न जाने कितने आने-जाने वालों की चहचहाट सुनाई देती है। यहां पहुंचते-पहुंचते अलग अलग तरीके के लोग भीख मांगने आने लगे । कोई अपनी बुरी आवाज में गाना गाता, तो कोई अलग अलग करतब करके दिखाता और भीख मांगता पर किन्नरों की एक बात मुझे बहुत अच्छी लगी। वे किसी भी स्त्री से पैसे नहीं मांगते थे और ना ही उन्हें परेशान करते। इस तरह ट्रेन के सफर के मजे लेते हुए दोपहर तीन-साढ़े तीन तक हम प्रयागराज संगम पहुँच चुके थे। और वहीं से हमने प्रयागराज का त्रिवेणी संगम भी देखा। ऐसा मेरे पास बैठी एक स्थानीय स्त्री ने बताया की भगवा रंग में लिपटी जो वस्तुएँ दिख रही हैं वे असल में दफनाई हुयी लाशें है। यह मेरे लिए एक विचित्र और डरावना अनुभव था क्योंकि मैंने यह पहली बार देखा की लाशों को ऐसे नदी के किनारे दफनाया जाता है। ट्रेन में कुल्हड़वाली चाय बेचने वाले आने लगे थे। कुल्हड़ की चाय में मिट्टी की एक अलग ही सुगंध थी। इसी बीच एक बात और याद आई। हमारे सामने वाली सीट पर कुछ पुरुष यात्री बैठे थे। जिनमें से एक व्यक्ति का देखने का तरीका कुछ संदेहास्पद था। जो दादर स्टेशन पर चढ़ा था। उसका बात करने का तरीका भी कुछ अलग ही था। वह हमारी ओर देखते हुए अपने साथियों से बातें करता। उसकी इन हरकतों को देखकर थोड़ा सा डर क्योंकि हमारे आसपास सभी पुरुष थे और सिर्फ हम **3** लड़कियां थी। अंत में जाकर स्टेशन पर उतरा। उतरने से पहले उसने हमसे सिर्फ इतनी ही बातचीत की आप लोग कहां से आए हैं**?** और हमें बताया कि वह संगम दर्शन के लिए जा रहा है। उसके उतरने के बाद लगा शायद उस आदमी को हमारी भाषा सुनकर कुछ अचरज होता होगा इसलिए वह हमें इस दृष्टि से देखता होगा क्योंकि हम कोंकणी बोल रहे थे और वह हिंदी भाषी था।

इलाहाबाद स्टेशन पर एक स्त्री और एक पुरुष चढ़ा जो हमारे सामने वाली सीट पर आकर बैठ गया को देखकर कुछ अजब लगा क्योंकि उस आदमी ने लगभग **3** घंटे सफर किया इसके बीच कुछ न कुछ खाते पीते ही रहा उसको देख कर लग रहा था क्या इसने कभी कुछ खाया भी है इस तरह ऐसे कई राहों की हम सब पर अजब गजब लोगों को अनुभव करते हुए सफर करते करते रात के आठ बज गए थे और हम ट्रेन का सफर समाप्त कर बनारस पहुँच चुके थे।

बनारस का पहला अनुभव

हमने बनारस की धरती पर पैर रखा। यह मेरे लिए एक अनूठा अनुभव था।भगवान शिव की नगरी वाराणसी एक बहुत ही प्राचीन और आध्यात्मिक शहर है। वहाँ का वातावरण कुछ अलग ही था। हर तरफ यात्रियों की भीड़ ही भीड़ थी। यहाँ तक की रेल्वे स्टेशन भी किसी मंदिए के समान ही लग रहा था। स्टेशन से नीचे उतरते समय हमने देखा की स्टेशन की इमारत मंदिर जैसी थी। जहां यात्रियों के आराम करने की सुविधा के साथ-साथ यात्रियों के इलाज की भी व्यवस्था की हुई थी। स्टेशन से बाहर आते ही एक तरफ तो गाड़ियों का शोर सुनाई दे रहा था। वहीं दूसरी ओर कुछ लोगों के लोकगीत और मंदिर की घण्टियों के स्वर कानों में सुनाई दे रहे थे। यह एक अनोखा अनुभव था।

अब हमें स्टेशन से होटल "पैराडाइज रेजीडेंसी" तक जाना था। हमें लेने के लिए गाड़ियां आई थी। गाड़ियों में बैठकर हम होटल की तरफ बढ़े। रास्ते में बनारस शहर की रात की खूबसूरती को अपनी आँखों से देखा और महसूस किया। ऐसा लग रहा था कि हम किसी अलग दुनिया में पहुँच गए हों। रास्ते के हर कोने पर मंदिर नज़र आ रहे थे। इससे एक बात तो स्पष्ट हो गयी थी कि क्यों इस भूमी को देवों की नगरी और मंदिरों का शहर कहा जाता है और किस तरह यहाँ अध्यात्म कूट-कूटकर भरा हुआ है। रास्ते में जाते वक्त ही हमने पूरे गाजे-बाजे के साथ निकलती हुयी बारातों को भी देखा। हर्षोल्लास में डूबी, नाचती-गातीं, एक के बाद एक लगातार चार बराते हमने देखीं। ऐसा प्रतीत हो रहा था के मानो जैसे यह बारातें हमारे स्वागत के लिए ही यहाँ आई हों। आमतौर पर गोवा में इस तरह से बाराते नहीं निकाली जातीं। इस तरह वहाँ की संस्कृति का एक अद्भुत स्वरूप हमें देखने को मिला। आगे बढ़े तो रास्ते में एक मुस्लिम व्यक्ति का जनाजा निकलते हुए देखा। एक ही साथ हमें जीवन के दो अलग-अलग पक्ष देखने को मिले। एक तरफ तो शादी की शहनाई और बैंड-बाजा और खुशियों की लहर, तो वहीं दूसरी तरफ जनाजे में फैला एक भयानक सन्नाटा। जीवन का हर पल उस समय हमारे आँखों के सामने था और उसे हम महसूस कर सकते थे।

रास्ते में एक बड़ी से रैली भी दिखी। जहां लोग जयकारे लगाते और अपनी धुन में मस्त नजर आ रहे थे। पूछने पर पता चला उस दिन हिन्दी के कवि रविदास उर्फ रैदास की जयंती थी और उसी पंथ के लोग इसका उत्सव मना रहे थे। किसी साहित्यिक व्यक्ति की जयंती पर इतना बड़ा जुलूस देखकर आश्चर्य हुआ और यह आभास हुआ कि यहाँ संतों और साहित्यकारों को कितना सम्मान दिया जाता है। रैदास के जन्म के इतने वर्षों पश्चात भी उनकी जयंती इतने उत्साह से मनाई जाती है। उस रैली के बीच में रास्ता निकालते हुए हम होटल "पैराडाइज रेजीडेंसी" पहुंचे।

होटल की सुविधाएं बहुत अच्छी थी। रात को जल्दी खाना खाकर सो गए क्योंकि दूसरे सुबह जल्दी उठना था। वहीं से हमारे प्रवास के दूसरे और प्रमुख पड़ाव का प्रारम्भ होनेवाला था।

बनारस की पहली सुबह

गंगा के तीर पर बसा बनारस शहर धर्म संस्कृति और शिक्षा का केंद्र है। जहां वरुणा और 80 नदियां गंगा में विलीन हो जाती हैं और इन्हीं दोनों नदियों के नाम पर इस शहर का नाम वाराणसी पड़ा। बनारस शहर विश्व के प्राचीनतम शहरों में से एक है। यह शहर भारत की धरोहर और संस्कृति को समेटे हुए 'देवों की पुण्य भूमि', 'मंदिरों के शहर' के रूप में प्रचलित हो चुका है। धार्मिक राजधानी, शिव की नगरी, दीपों का शहर, ज्ञान की नगरी और ना जाने किन-किन नामों से गौरवान्वित इस भूमि पर कबीर, वल्लभाचार्य, रविदास, रामानंद, प्रेमचंद, जयशंकर प्रसाद रामचंद्र शुक्ल, उस्ताद बिस्मिल्लाह खान जैसी महान विभूतियों का जन्म हुआ है। बनारस शहर की स्थापना लगभग 5000 वर्षों पूर्व स्वयं भगवान शिव ने की थी और यह स्थान हिन्दू तीर्थस्थलों में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। इसका उल्लेख कई पुराणों में, महाभारत में, रामायण में, तथा ऋग्वेद तक में मिलता है। एक ऐसा शहर जो अपनी धार्मिक मान्यताओं के साथ अपनी व्यापारिक क्षेत्र के लिए भी जाना जाता है। जहां की रेशमी बनारसी साड़ियां, मलमल के दुपट्टे, इत्र, हाथीदाँत और शिल्प कला से बनी वस्तुएं विश्व में अपनी एक अलग पहचान बना चुकी है इसलिए यह शहर व्यापार का एक महत्वपूर्ण केंद्र माना जाता है। जहां स्वयं भगवान बुद्ध का जन्म हुआ। ऐसी पवित्र और पुण्य नगरी बनारस जहां की सकरी घुमावदार भीड़ भरी गलियां सिर्फ भारत में ही नहीं अपितु पूर्ण विश्व में प्रसिद्ध हैं। सिर्फ धर्म, अध्यात्म और व्यापार के क्षेत्र में नहीं अपितु शिक्षा के क्षेत्र में भी उसका योगदान महत्वपूर्ण है। क्योंकि अनेक भारतवासियों और विदेशियो ने यहाँ आकार शिक्षा ग्रहण की है। ऐसे प्रदेश में हम खड़े थे। पहले दिन सुबह जल्दी उठकर कमरे की खिड़की से सूर्योदय का पहला नज़ारा देखा। ऐसे प्रदेश की सुबह का दृश्य देखते हुए मन बहुत पुलकित हो उठा और मैं अपने-आप को धन्य मानने लगी कि कम से कम एक शैक्षणिक यात्रा के बहाने ही सही हमें इतने महत्वपूर्ण और प्राचीन शहर की संस्कृति को जानने का अवसर मिला। मुझे जल्द ही तैयार होना था क्योंकि बनारस में पहले दिन हम 'बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय' जानेवाले थे। जिसे 'काशी विश्वविद्यालय' के नाम से भी जाना जाता है।

बनारस में यह हमारी पहली सुबह थी। बनारस की छोटी-छोटी   भूल भुलैया जैसी भीड़ भरी गलियां जिनमें आकर कोई भी नया व्यक्ति रास्ता भटक सकता है एक बात और इन छोटी-छोटी गलियों में मनुष्य के साथ साथ ही गाय भी अपना रास्ता बनाते हुए चलती है और दोनों का तालमेल कुछ इस प्रकार का होता है कि दोनों ही एक दूसरे को परेशान नहीं करते। इन्हीं छोटी-छोटी गलियों में गाड़ी वाले भी अपना रास्ता बना लेते हैं। लेकिन इन गलियों में थोड़ी गंदगी भी है।जो इस शहर की शोभा में दाग प्रतीत होती है। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के संसदीय क्षेत्र

वाराणसी में इस तरह की गंदगी देखकर थोड़ी सी निराशा जरूर हुई।ऐसी गलियों से निकलकर हम मुख्य सड़क पर पहुंचे। एक साथ इतनी भीड़ को जाती हुई देख रास्ते की लोग हैरानी से हमारी ओर देख रहे थे। उनमें से एक व्यक्ति ने हमसे पूछ भी लिया "सुबह-सुबह इतनी बड़ी सेना कहां जा रही है"?

बनारस हिंदू विश्वविद्यालय का दौरा

चलते हुए काशी हिन्दू विश्वविद्यालय पहुंचे। वहाँ के मुख्य द्वार से ही उस विश्वविद्यालय की भव्यता का अंदाज़ा लगाया जा सकता है। बनारस हिंदू विश्वविद्यालय की स्थापना 19 जनवरी 1916 में बसंत पंचमी के दिन मदन मोहन मालवीय द्वारा की गई थी जिसमें औपचारिक अध्ययन का कार्य 13 दिसंबर 1921 से हुआ। इस विश्वविद्यालय को 'राष्ट्रीय संस्थान' का दर्जा प्राप्त है। यह एशिया का सबसे बड़ा आवासीय विश्वविद्यालय है। इस विश्वविद्यालय के दो परिसर हैं एक मिर्जापुर जनपद में और दूसरा वाराणसी में। वाराणसी का परिसर 1300 एकड़ में फैला हुआ है। जिसमें 6 संस्थान 14 संकाय 140 विभाग है। परिसर में महिला महाविद्यालय, वसंत कन्या महाविद्यालय जैसे अन्य संस्थानों के साथ चिकित्सा विज्ञान संस्थान, कृषि विज्ञान संस्थान, प्रबंध शास्त्र संस्थान, विज्ञान संस्थान दृश्य कला संकाय, वाणिज्य संकाय, विधि संकाय, शिक्षा संकाय आदि स्थित है। परिसर में सर सुंदरलाल चिकित्सालय, गौशाला, स्टेट बैंक ऑफ इंडिया की शाखा, प्रेस और बुक डिपो एवं प्रकाशन भी स्थित हैं। विश्वविद्यालय में कई छात्रावास है। विश्वविद्यालय के प्रवेश द्वार पर ही मालवीय जी की विशाल मूर्ति भी है। चलते हुए हमने पूरा विश्वविद्यालय परिसर घूमा। वहाँ अंत में हम विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग में पहुंचे। जहां हमारी मुलाक़ात विभागाध्यक्ष से नहीं हो पायी किन्तु प्रसिद्ध लेखक और प्राध्यापक डॉ. अवधेश मिश्र जी से हमें मिलने का अवसर मिला। साथ ही साथ विभाग के और एक प्राध्यापक डॉ. सदानंद शाही ने हमसे मुलाकात की और हमें प्रेमचंद और कबीर पर एक व्याख्यान दिये। जिसमें इन्होंने प्रेमचंद की एक प्रसिद्ध और हृदयस्पर्शी कहानी 'हमीद का चिमटा' या 'ईदगाह' को सौंदर्य की दृष्टी से समझाने का प्रयास किया। उन्होंने इसे सुंदरता से जोड़कर व्याख्या की उनके अनुसार सुंदरता का संबंध हमारी संवेदना के साथ होता है। उन्होंने कहा इस कहानी में कुरूप चिमटा सौंदर्य का प्रतीक है । सत्य के रास्ते पर चलने वाले को सदा ही उपेक्षा और उपहास का सामना करना पड़ता है । जैसा कि इस कहानी में हमीद के साथ होता है। कबीर के बारे में

बात करते हुए वे उन्हें रहस्यवाद से जोड़कर देखते हैं। रहस्यवाद के पांच चरण बताते हैं। जागृति, परिष्कार, विघ्नों की रात, प्रकाश अनुभव और आत्मानुभव। कबीर एक अदृश्य शक्ति की कल्पना करते हैं और उससे एकाकार होते दिखाई देते है। व्याख्यान के उपरांत उन्होंने हमारी जिज्ञासा को शांत करते हुए हमारे प्रश्नों के उत्तर भी दिए और गोवा विश्वविद्यालय से जुड़ा हुआ अपना एक अनुभव हमारे साथ साझा किया। जब वे गोवा विश्वविद्यालय में इंटरव्यू देने के लिए आए थे और उनका चयन नहीं हुआ था किंतु संयोग की बात यह है कि उस वर्ष हमारी विभाग अध्यक्ष डॉ. वृषाली मांद्रेकर का चयन हुआ था। इस तरह हमने उनसे विदा ली। उन्होंने हमें भारत कला भवन देखने का सुझाव दिया

हम विश्वविद्यालय के केंद्रीय पुस्तकालय पहुंचे और वह पुस्तकों का संग्रह देखा। इस पुस्तकालय में बहुत ज्यादा किताबें हैं । एक बहुत बड़ा पुस्तकालय हैं जहांना सिर्फ किताबें है अपितु कई पुरानी पांडुलिपिया भी संरक्षित है। परंतु इस पुस्तकालय की एक बात जो मुझे अच्छी नहीं लगी। ना तो हम यहां किसी पुस्तक को बिना इजाजत हाथ लगा सकते हैं और ना ही इनके छायाचित्र ले सकते हैं।

विश्वविद्यालय प्रांगण के भीतर ही विश्वनाथ का एक भव्य मंदिर भी है। जिसके हमने दर्शन किए। इस मंदिर को

काशी विश्वनाथ मंदिर का एक छोटा स्वरूप कह सकते हैं। यह मंदिर भी बहुत सुंदर है। इसके उपरांत हमनें भोजन किया और भारत कला भवन देखने गए। किन्तु समय के अभाव के कारण हमें वहाँ प्रवेश नहीं मिला और हम वहीं से राजकमल प्रकाशन द्वारा विश्वविद्यालय परिसर में लगाई गयी पुस्तक प्रदर्शनी देखने गए। वहाँ हमने हिन्दी के विख्यात लेखकों की अन्य किताबें देखीं और खरीदी। वापस आते हुए हमने वहाँ का स्ट्रीट फूड और बनारस के मशहूर कुल्हड़ की चाय का भी आनंद लिया। शाम के वक्त लौटते समय हमने विश्वविद्यालय परिसर में हमने मोर को भी बेहद करीब से देखा। उसे देखते ही जैसे दिनभर की सारी थकान मानो मिट गयी। शाम को बनारस की सड़कों पर टहलते हुए हमने महसूस किया कि बनारस की सड़कों की रौनक शाम को और भी बढ़ जाती है और दीपों का शहर और भी खूबसूरत दिखाई देता है। कहीं ना कहीं से मंदिर की घंटियों की आवाज में कानों में मधुर संगीत की तरह सुनाई पड़ती है। अंत में हम बनारस की पहली शाम को विश्वविख्यात गंगा आरती देखने देखने अस्सी घाट पहुंचे किन्तु वहाँ पहुँचने में हमें विलंब हो गया क्योंकि आरती पहले ही समाप्त हो चुकी थी। अत: हम घाट घूमकर वापस होटल आ गए। किन्तु इसी बीच रात में हमने बनारस का एक नया रूप देखा, वहाँ स्ट्रीट फूड की भरमार थी। इन दुकानों में

भीड़ भी बहुत थी। इससे अंदाज़ा लगाया जा सकता है की बनारस न केवल अध्यात्म के लिए अपितु अपने खाने के लिए भी उतना ही प्रसिद्ध है। और इस तरह वहां का प्रसिद्ध टमाटर चाट खाकर हमने अपने पहले दिन की समाप्ति की।

सारनाथ के दर्शन

बनारस के दूसरे दिन सुबह आठ-साढ़े आठ बजे तक ही हम होटल से बाहर निकल गए थे। आज हमारा सारनाथ

जाने का कार्यक्रम तय था। सारनाथ वाराणसी से पूर्वोत्तर में दस किलोमीटर दूर स्थित बौद्ध धर्म के चार प्रमुख तीर्थस्थलों में से एक माना जाता है। सारनाथ पहुँचते ही वहाँ की खूबसूतरती देखकर हमारी आँखें चौंधीया गईं। सारनाथ में भगवान गौतम बुद्ध की एक विशाल प्रतिमा थी। इस स्थान का महत्व इस बात से और भी है। सारनाथ वही स्थान है जहां भगवान बुद्ध ने ज्ञान प्राप्ति के बाद अपना प्रथम उपदेश दिया था और उनके शिष्यों ने यहीं से शिक्षा ग्रहण कर इस धर्म का प्रचार प्रसार विश्व में किया। इसलिए इस स्थान को "धर्म चक्र प्रवर्तन" के नाम से भी जाना जाता है। सारनाथ का उल्लेख जैन और हिंदू धर्म में भी मिलता है। जैन ग्रंथ में इसे "शिवपुर" कहा गया है। जैन धर्म के 11 वे तीर्थंकार श्रेयांसनाथ का जन्म यही हुआ था। सारनाथ में अशोक का चतुर्मुख सिंहस्तम्भ, भगवान बुद्ध का मन्दिर, धामेख स्तूप, चौखन्डी स्तूप, राजकीय संग्राहलय, जैन मन्दिर, चीनी मन्दिर, मूलंगधकुटी और नवीन विहार इत्यादि दर्शनीय हैं। सारनाथ में सारंगनाथ महादेव का मंदिर भी है और अन्य कई बौद्ध मंदिर भी थे। मंदिर के आसपास सुंदर फूलों का बगीचा है। इस मंदिर में देसी और विदेशी पर्यटको का ताता लगा रहता है। मंदिर के आसपास का परिचय बहुत ही रमणीय यहां पहुंचकर आत्मा शांति की अनुभूति होती है। मंदिर में करते ही सामने महावीर सरोवर है । जिसमें गुलाबी कमल के सुंदर फूल खिले हुए थे और कई लोग इन फूलों के पत्तों पर कुछ सिक्के फेंक रहे थे। वैसा क्यों कर रहे थे यह तो नहीं जानते किंतु इतना जरूर कहा जा सकता है कि इसके पीछे भी उनकी कोई मान्यता होगी। मैंने भी एक गुलाब के पत्ते पर सिक्का रखा। मंदिर के चारों ओर बगीचे में विविध लिपियों में बौद्ध धर्म के संदेश लिखे हुए हैं। ऐसा माना जाता है कि इस मंदिर का निर्माण और

आसपास के सभी स्तूपो का निर्माण अशोक काल में किया गया था। लेकिन मोहम्मद गजनी ने सब विध्वंस कर दिया था किंतु बाद में पुरातत्व विभाग ने इन स्थानों की खोज की और इनका संरक्षण किया। यही कारण है कि अशोक कालीन अन्य मूर्तियां और अन्य कई सामान संग्रहालय में मौजूद है। सारनाथ सिर्फ पर्यटन के लिए ही महत्वपूर्ण नहीं है; अपितु इसका राष्ट्रीय महत्व है क्योंकि अनेक राष्ट्रीय चिन्हों जैसे तिरंगे में मौजूद अशोक चक्र और हमारा राजकीय चिन्ह चतुर्मुखी सिंह अशोक स्तंभ से लिया गया है। जो आजकल सभी सरकारी दफ्तरों, कागजों में हमें प्राप्त होता है। ऐसे राष्ट्रीय एवं संस्कृति पर्यटन स्थल पर घूमने के बाद सारनाथ में ही हमने बुद्ध से जुडी अनेक प्रतीमाएँ और अन्य सामान भी वहाँ की याद के रूप में खरीदा और वहीं हम सारनाथ में कला प्रदर्शनी में पहुंचे।

बनारस कला प्रदर्शनी में हमने बनारस की मशहूर बनारसी साड़ियों को बनते हुए देखा। इन साड़ियों की विश्व में अपनी एक अलग पहचान है। इन साड़ियों को बनाने में मजदूर किस तरह खून पसीना एक करके लगे रहते हैं और अपने हाथों से एक-एक धागे को पिरोकर उनपर सुंदर कढ़ाई करते हैं। वहाँ के मजदूरों से बात करके पता लगा कि इन साड़ियों की बनावट में कई दिनों का वक्त लगता है। एक दिन में सिर्फ आधा मिटर हेंडलूम साड़ी बुनकर तैयार होती है। साथ ही हमने वहाँ पर लगीं अन्य तरह की बनारसी साड़ियाँ हेंडलूम से बना पर्स, बेग, शोभनीय वस्तु आदि को भी निहारा। इस तरह सारनाथ से एक सुखद अनुभव लेकर हम एक ऐसे स्थल के लिए निकले जिसका हिन्दी साहित्य के इतिहास में एक महत्वपूर्ण स्थान है।

साहित्यकारों की जन्मस्थली से जुड़े अनुभव

लमही एक ऐसा गांव जहां हिन्दी के उपन्यास सम्राट और एक अतुलनीय लेखक और साहित्यकार प्रेमचंद की जन्मभूमि है। वहाँ पहुँचते ही हमने सर्वप्रथम गांव के प्रवेशद्वार पर प्रेमचंद और उनके उपन्यास के पात्रों की मूर्तियां देखीं। इन मूर्तियों से अंदाज़ा लगाया जा सकता था कि प्रेमचंद और उनके उपन्यास के पात्र इस गांव और वहाँ के लोगों के हृदय में क्या स्थान रखते हैं। ऐसे गौरवमयी व्यक्ति की जन्मस्थाली देखने के लिए हम उनके गांव लमही, उनके निवास स्थान गए और वहाँ उनका जन्मस्थान देखा।

30 जुलाई 1980 को इसी स्थान पर इस महान हस्ती का जन्म हुआ था। जिसने हिंदी साहित्य में अपना एक ऐसा स्थान बनाया। जिसका कोई सानी नहीं है। भारत में ही नहीं अपितु विदेशों में भी इनके साहित्य का डंका बजता है। इनके नाम पर डाक टिकट जी भी जारी किया गया है। इन्होंने हिंदी में लगभग 300 कहानियां, 11 उपन्यास और हंस, माधुरी, हंस जैसी पत्रिकाओं का संपादन कर हिंदी साहित्य में अपना अविस्मरणीय योगदान दिया। प्रेमचंद की 125वीं जयंती पर सरकार की ओर से घोषणा की गई और वाराणसी से लगे इस गाँव में प्रेमचंद के नाम पर एक स्मारक तथा शोध एवं अध्ययन संस्थान बनाया गया। यहां के संरक्षक सुरेशचंद्र दुबे ने हमें प्रेमचंद के बारे में, उनके साहित्य के बारे में और उनके परिवार के बारे में विस्तृत जानकारी दी। उन्होनें बताया इस गांव में प्रेमचंद के जन्म हुआ। यह इस गांव का सौभाग्य है किन्तु प्रेमचंद के जीवित रहते उन्हें इसी गांव में अपमानित किया गया। साहित्य में अपनी यथार्थवादी और प्रगतिशील विचारों के लिए जाने जाने वाले प्रेमचंद वास्तविक जीवन में भी इन प्रगतिशील विचारों का अनुसरण करते थे। यही कारण था इन्होने विधवा शिवरानी से दूसरा विवाह किया। जिसके कारण इन्हें पारिवारिक और सामाजिक विरोध का सामना करना पड़ा। यहाँ तक की उन्हें अपने परिवार की नाराजगी का भी सामना करना पड़ा। यही कारण है कि आज उनका परिवार इस गांव में नहीं रहता

प्रेमचंद जन्मस्थली में बने हुए एक छोटे से संग्रहालय में प्रेमचंद के साहित्य का पूरा संग्रह मिला। साथ ही प्रेमचंद का निजी सामान जैसे प्रेमचंद का चश्मा, प्रेमचंद की घड़ी, चरखा आदि वस्तुओं को भी बारीकी से देखने का अवसर मिला। प्रेमचंद की जन्मस्थली देखने के उपरांत हम उनके घर में भी गए। जहां रहते हुए उन्होनें इतने महान और सदाबहार उपन्यास लिखे। उस घर की छत पर खड़े होकर हम भी प्रेमचन्द के घर के साक्षी बने। इसी गांव के किसी होरी को देखकर उन्होंने 'गोदान' लिखा होगा और इसी घर के पास की किसी निर्मला से प्रेरणा लेकर 'निर्मला' जैसा एक बेहतरीन उपन्यास लिखा होगा। प्रेमचंद जी के घर और उस संग्रहालय को देखने के पश्चात पास ही स्थित प्रेमचंद सरोवर भी देखा। वहाँ तैरती बदखे वहाँ की खूबसूरती में चार-चाँद लगा रही थी। दिन का अंत यहीं नहीं हुआ क्योंकि आगे हम मध्ययुगीन साहित्य के एक एक प्रमुख संत कवि कबीर की जन्मस्थली लहरतारा पहुंचे।

 लहरतारा गांव के लहरतारा तलाव में ही नीरु और नीमा नाम की दंपति को पानी में तैरती बांस की डलिया में एक बच्चा मिला। उन्होंने उस बच्चे को अपनाया उसका पालन पोषण किया। यह बच्चा बड़े होकर कबीर नाम से प्रख्यात हुआ। अपने फक्कड़ स्वभाव और मस्त मौला जीवन शैली के लिए कबीर जाने जाते हैं। उन्होंने सामाज में फैली कुरीतियों, कर्मकांड, अंधविश्वास की निंदा की और सामाजिक बुराइयों की कड़ी आलोचना की थी। अपनी इसी क्रांतिकारी विचारों के कारण ही समाज का विरोध झेलना पड़ा और उन्हें उस गांव से निकाल दिया गया। वे हिन्दी साहित्य के

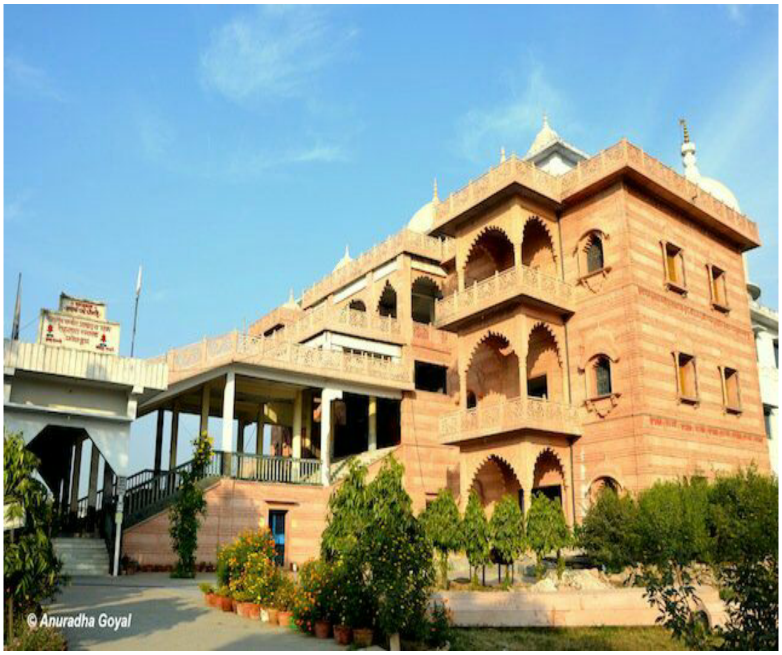

भक्तिकालीन युग में 'ज्ञानाश्रयी-निर्गुण शाखा की काव्यधारा के प्रवर्तक' माने जाते हैं। हिंदी साहित्य में इतना महत्वपूर्ण स्थान रखने वाले कबीर को जीवित रहते हुए कभी इतना सम्मान नहीं दिया गया। उस व्यक्ति की मृत्यु के इतने सालों बाद जिस जगह पर वे मिले थे उसी लहरतारा तलाव के किनारे एक भव्य महल का निर्माण किया जा रहा है। जिसे देखते ही आंखें भौंचक्की सी रह गईं क्योंकि जिस प्रकार की भावननात्मक और स्वाभाविकता की अनुभूति हमें प्रेमचंद की जन्मस्थली में महसूस हुई। वही अनुभूति हमें कबीर की जन्मस्थाली पर नहीं हुई। वहाँ एक विशाल भवन बनाया गया है। यह भवन भव्यता मे किसी राजा-महाराजा के भवन को भी पछाड़ सकता है। पत्थरों को तराशकर शानदार नक्षीकाम करके इस भवन का निर्माण हो रहा है। अनुयायी उनकी पूजा करते हैं और उनके नाम पर प्रसाद बांटते हैं। इससे एहसास हो रहा था की जिस कबीर को उनके विद्रोही स्वभाव के कारण जाना जाता है। जिन्होनें मूर्तीपूजा का विरोध किया। जिस माया को महठगिनी माना। आज उसी जगह पर वे सब मौजूद नहीं हैं। कबीर के विचारों का अनुसरण करने का, उनकी मान्यताओं का सम्मान करने का आभास वहाँ नहीं हुआ। कबीर को एक सादा झोंपड़ी में भी बिठाते तो भी पर्यटकों पर उनका वही प्रभाव पड़ता जो उस भवन को देखने के बाद पड़ता है। क्योंकि कबीर तो सादा जीवन उच्च विचार की धारणा को माननेवालों में से थे। लहरतारा तालाव को भी विस्तृत रूप दिया गया है। यह सब देखकर थोड़ी सी निराशा सी महसूस हुई क्योंकि यहां ना ही उनके जीवन के संबंध में और उनके साहित्य के संबंध में कोई जानकारी दी गई है। लहरतारा से निकालने की बाद हमने भोजन किया और तत्पश्चात हम फिर से गंगा घाट पर गए क्योंकि आज नौका विहार करते हुए गंगा घाटों का दर्शन करने वाले थे और गंगा आरती को भी देखने वाले थे।

घाट की गंगा आरती

गंगा भारत की एक महत्वपूर्ण नदियों में से एक है। जो हिमालय में गंगोत्री से निकलती हुई भारत और बांग्लादेश के 2025 किलोमीटर का सफर तय कर बंगाल की खाड़ी में समुद्र से मिलती है। गंगा जिसे सलिला पापनाशिनी, मोक्ष

प्रदायिनी और ना जाने कितने ही नामों से संबोधित किया जाता है। ऐसी पवित्र गंगा नदी वाराणसी हरिद्वार और प्रयागराज जैसे महत्वपूर्ण धार्मिक स्थलों से बहती हैं। इसलिए इसे भी धार्मिक महत्व प्रदान होता है। इसका उल्लेख रामायण, महाभारत, वेद-पुराण और उपनिषदों तक में मिलता है। माना जाता है गंगा स्नान करने से मनुष्य के सभी पाप धुल जाते हैं और उसे मोक्ष प्रदान होता है। इसके जल में 'विक्टोरियोकेस' नाम से कोई जीवाणु मिलता है जो हानिकारक जीवाणुओं को खत्म कर पानी को हमेशा निर्मल और स्वच्छ रखता है। इसी कारण इस नदी का महत्व वैज्ञानिक दृष्टि से भी है। ऐसी पवित्र गंगा नदी देखने के लिए हम बनारस के अस्सी घाट पहुंचे। हां घाट पर छोटे-छोटे बच्चे दीपक और फूल भेज रहे थे उन्हें देखकर बहुत प्रेरणा मिली क्योंकि पूछने पर पता चला यह बच्चे स्कूल भी जाते हैं और पढ़ाई के साथ साथ शाम को यहां इस तरह फूल और दिया बेचकर अपने परिवार की आर्थिक मदद भी करते हैं इन्हें देख कर बहुत अच्छा लगा।

नाव में बैठकर गंगा घाटों का दर्शन करना प्रारम्भ किया। इससे पहले भी मैंने नौकाविहार किया था। किन्तु वह गोवा के समुद्रों में था और यह एक अलग ही अनुभव था। समुद्र की लहरों और नदी की लहरों में बहुत अंतर होता है। उसी प्रकार का अंतर इन दोनों नौकाविहारों में था। गोवा में नौकाविहार करते समय एक अनंत समुद्र में चारों और सिर्फ पानी ही पानी दिखाई देता है किन्तु गंगा घाट के किनारे पर विशाल मंदिरों की झांकी दिखाई दे रही थी और अलग-अलग घाटों पर स्थित मंदिरों की शैली भी भिन्न ही थी।

नाव चलाने वाले कैवट ने न सिर्फ हमें नौका विहार करवाया अपितु बनारस के नामकरण, उसकी विशेषताओं और जहां भी, जिस घाट पर भी हम पहुँचते वहाँ पर उस घाट से जुड़ी कोई पौराणिक कथा, और उस घाट की विशेषताओं के बारे में भी उसने हमें बताया। इस तरह न सिर्फ हमारे आँखों में दृश्य संजोये जा रहे थे, अपितु मस्तिष्क को वह कहानियां और किंवदंतियां मानो आँखों के सामने घटती सी नज़र आ रहीं थी।

कई किलोमीटर में फैले गंगा तट पर हमने नौका विहार करते हुए लगभग पैंतीस से चालीस घाटों के दर्शन किए। जिसमें पशुपतिनाथ घाट, सीता घाट, दश्वमेध घाट, पेशवा घाट आदि शामिल हैं। इन सभी घाटों में प्रमुख आकर्षण का केंद्र था काशी का विख्यात महशमशान कहा जानेवाला "मनिकर्णिका घाट"। जहां दिन-रात अंतिम-संस्कार होते रहते हैं और चिता की राख़ कभी ठंडी नहीं पड़ती। यह सुनकर अचरज हुआ की यहाँ इतनी चिताएँ जलाई कैसी जाती हैं। किन्तु हमने स्वयं वहाँ एक साथ चार-चार, पाँच-पाँच चिताएँ जलती देखीं। धुएँ का गुबार चारों और फैला हुआ था। किन्तु अचरज की बात यह थी की फिर भी वहाँ बदबू नहीं आ रही थी। यही यहाँ की विशेषता है। इसके

बारे में मैंने पुस्तकों में पढ़ा था, टीवी-रिपोर्ट्स में देखा था किन्तु यह नज़ारा प्रत्यक्ष हमारी आँखों के सामने था। नाविक ने हमें बताया क इस घाट का नाम 'मनिकर्णिका' पड़ने के पीछे एक कहानी है जो शिव और पार्वती से जुड़ी हुई है।

कथा इस प्रकार है शिव और पार्वती एक बार इस घाट पर स्नान करने आए। स्नान करते वक्त शिव के गले का मणिका और पार्वती की कनिका अर्थात कान का बाला यहाँ गिर गया। जिसे खोजने का शिव ने बहुत प्रयास किया किन्तु वह नहीं मिली। इस कारण पार्वती उनसे रुष्ठ हो गयी और शिव का उपहास करने लगीं। तीनों लोक के दाता उनकी करणिका तक न ढूंढ पाए। यह सुन शिव क्रोधित हुए और क्रोध की अग्नि में जलते हुए इस घाट को श्राप दिया कि इस घाट पर दिन के चौबीसों घंटे चिताएँ जलती रहेंगी। किन्तु जब पार्वती ने उन्हें समझाया तब जाकर शिव ने कहा कि दिन के बारह बजे जो भी पार्थिव शरीर यहाँ लाया जाएगा उसे पहले काशी के विश्वनाथ मंदिर में ले जाकर नहलाया, धुलाया जाएगा और फिर विश्वनाथ का चन्दन का लेप लगाकर लगाकर उसे यहाँ लाकर उसका अंतिम संस्कार किया जाएगा। इस तरह इस घाट की पौराणिक कथा सुनके के बाद हमने यह भी जाना की दश्वमेध घाट का नाम इसलिए पड़ा क्योंकि यहीं पर राजा दशरथ ने अश्वमेध यज्ञ किया था। इस तरह घाटों का दर्शन करते हुएहम नदी के बीच बने एक द्वीप पर पहुंचे। यहाँ घोड़े, ऊंट सवारी के लिए रखे हुए थे। चाय की कुछ दुकाने भी बनी हुई थीं। हमने कुछ देर रुककर वहाँ चाय भी पी। कई लोगों ने घुडसवारी की।

शाम की बेला आ पहुंची थी और सूर्यास्त होने वाला था। सूर्यास्त का नज़ारा वैसे भी बहुत सुंदर ही होता । किन्तु यहाँ उसकी शोभा कुछ और ही थी। एक तरफ गंगा के किनारे पर स्थित घाट और दूसरी तरफ विशाल नदी का तीर। इनके बीचोंबीच रहकर हमने सूर्यास्त का एक अद्भुत नज़ारा देखा। आकाश की लालिमा चारों और फैल गयी थी और सूर्यास्त देख ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे एक आग का बड़ा गोला धीरे-धीरे पानी में डूबता जा रहा हाओ। पानी पर उसकी लाल और पीली किरणों से हिलती तरंगों के दृश्य को मैं आँखों में बसा लेना चाहती थी। सूर्यास्त हो गया और वही दूसरी और गंगा की भव्य आरती का प्रबंध हो चुका था। वह गंगा आरती जिसकी लोकप्रियता केवल भारत में ही नहीं अपितु सम्पूर्ण विश्व में है। उस भव्य आरती के मनोरम दृश्य के हम साक्षी बननेवाले थे। भजनों से पप्रारम्भ हो आरती शुरू हो गयी और धीरे-धीरे लोगों का हुजूम बढ़ता ही चला गया। नाव पर नावों की कतार सी लग गयी। इनमें से एक नाव हमारी भी थी। हर कोई इस भव्य आरती के हिस्सा बनने के लिए लालायित था। यहाँ अध्यात्म की

एक ऐसी झांकी थी जो किसी नास्तिक मनुष्य के भीतर भी आस्था का भाव भर दे क्योंकि यहाँ किसी देवता की नहीं अपितु एक नदी की पूजा की जा रही थी। जो जीवांदायिनी जल का स्रोत है। जिसकी पवित्रता के बखान वेदों-पुरानों से लेकर आज तक चलते हैं। इसमें डुबकी लगाने से पापों से मुक्ति मिलती है। ऐसी गंगा को नमन करतेहुए हमने भी दीपों से गंगा की आरती की। जलते हुए दीपक को गंगा में छोड़ा।। पानी की लहरों पर तैरते हुए दीपक बहुत सुंदर दिखाइ दे रहे थे। उसे अभिवादन किया और उस पवित्र नदी को नमन करते हुए नदी का जल लेकर हम किनारे पर आए।

आज का दिन बनारस का हमारा सबसे खूबसूरत दिन था। पहले तो हम बौद्धों के तीर्थस्थल पर पहुंचे। फिर हिन्दी साहित्य में अभूतपूर्व योगदान देनेवाले साहित्यकारों की जन्मस्थाली देखी और उनके बारे में और करीब से जाना। जिनके बारे में हम पुस्तकों में पढ़ा करते थे या फिर अपने प्राध्यापकों से सुनते थे। तत्पश्चात गंगा आरती का दर्शन कर हम वापस आए और इन यादों को अपनी आंखों में संजोकर हम सभी सोने चले गए क्योंकि अगले दिन सुबह ब्रम्ह मुहूर्त में उठकर हमें काशी के सबसे महत्वपूर्ण स्थल काशी विश्वनाथ मंदिर में जाना था।

बाबा विश्वनाथ के दर्शन

बनारस में तीसरे दिन सुबह चार बजे उठकर, बनारसा की ठंड में नहा-धोकर तैयार होना कोई आसान काम नहीं था। किन्तु उत्सुकता इस बात की थी की हिन्दू के सबसे बड़े तीर्थ स्थलों में से एक बाबा विश्वनाथ के दर्शन के लिए हमें पहुंचाना था। हम सभी लड़कियों ने साड़ियां पहनी हुई थी क्योंकि हमें बताया गया था कि बाबा विश्वनाथ की लिंग के दर्शन करने के लिए साड़ियां पहनना अनिवार्य है अन्यथा हम वहां के दर्शन नहीं कर सकते इसलिए अधिकांश लड़कियों ने साड़ियां पहनी हुई थी। यही कारण था रास्ते पर चलते वक्त लोग हमें अचरज से देख रहे थे। भीड़ से बचने के लिए हम सुबह तड़के ही निकले। बनारस की गलियों में सुबह का एक अलग ही आकर्षण था। ठंडी-ठंडी हवा चल रही थी और सड़क पर चलने वाला हर व्यक्ती कोई न कोई रूप में ईश्वर का स्मरण कर रहा था। कोई गंगा स्नान करके वापस आ रहा था। तो कोई गंगा स्नान करने के लिए जा रहा था। उनके मुख पर हर-हर महादेव का जयकारा था। औरतों की एक टोली हमारे सामने से भजन गाते और नृत्य करते हुए निकली। लगा जैसे वे सब हमारा

ही स्वागत कर रहीं हों। गाड़ी से दस-पंद्रह मिनट सफर करने के बाद हम बाबा विश्वनाथ के धाम पहुंचे।

काशी विश्वनाथ मंदिर के मुख्य द्वार पर ही सुरक्षाबलों का घेरा था। मंदिर में अंदर कुछ भी ले जाने की अनुमती नहीं

थी। इसलिए हमें अपना सारा सामान रखने की व्यवस्था करनी थी। मंदिर के सामने फूल और प्रसाद की दुकानों पर अपना सामान और चप्पल रखने की व्यवस्था थी किन्तु शर्त यह थी की हमें उसी दुकान से फूल और प्रसाद लेने होंगे। एक ऐसी ही दुकान पर सामान रख हमने मंदिर में मुख्य द्वार से प्रवेश किया। उस समय भीड़ कुछ कम थी। इस कारण केवल पंद्रह-बीस मिनट कतार में खड़े रहने के बाद अंततः हमें हमने विश्वनाथ मंदिर में प्रवेश किया। मन अपने-आप शिव के जयकारे लगाने लगा था। धीरे-धीरे वहाँ के सभी मंदिरों के दर्शन कर हम विश्वनाथ धाम पहुंचे और वहाँ के लिंग के दर्शन किए। भगवान शिव के 12 ज्योतिर्लिंगों में से एक माना जाता है इस धाम का उल्लेख महाभारत से लेकर वेदों और उपनिषदों में मिलता है इस धाम के दर्शन करने से मनुष्य को शिव का आशीर्वाद मिलता है और उसे जन्म मरण के चक्र से मुक्त हो जाता है। मंदिर आदिकाल से काशी में स्थित है। शिव और पार्वती का आदि स्थान है। इसलिए इसे 'आदि लिंग' भी कहा जाता है। अनेक शासकों ने मंदिर को ध्वस्त करने का प्रयास किया। वर्तमान कालीन मंदिर का निर्माण इंदौर की महारानी अहिल्याबाई होलकर ने 18 वीं शताब्दी में किया और महाराजा रणजीत सिंह ने इस पर सोने का छत्र चढ़ाया।

मंदिर के दर्शन कर आत्मा के एक अलग ही शांति का अनुभव हुआ। क्योंकि हिन्दू धर्म में बाबा विश्वनाथ के दर्शन प्राप्त होना बहुत ही सौभाग्य की बात मानी जाती है और मैं आज भाग्याशाली थी। मंदिर के पंडित जी द्वारा अन्नपूर्णा मंदिर की जानकारी मिली। विश्वनाथ दर्शन के उपरांत हम बाहर निकलते ही वहाँ स्थित अन्नपूर्णा मंदिर पहुँचकर हमने अन्नपूर्ण माता के दर्शन किए। माता का प्रसाद लिया और अन्न-प्रसाद ग्रहण किया। यह प्रसाद खाते समय एक अलग ही तृप्ति और संतुष्टि प्राप्त हुई । क्योंकि इतने दिनों की यात्रा में आज हमने घर के जैसा खाना खाया था। पत्तलों पर परोसे गए गरम-गरम खाने में पत्तल की खुशबू बहुत ही मनमोहक लग रही थी और खाने का स्वाद और सुगंध और भी बढ़ा रही थी। वहाँ के सांभर चावल, आलू की सब्जी,

आचार, पापड़ और विशेषकर मोतीचूर का लड्डू खाकर मन आनंदित हो गया। मंदिर के कई कार्यकर्ताओं ने हमसे पूछा कि क्या हम केरल से आए हैं क्योंकि हम सभी लड़कियों ने साड़ियां पहनी हुई थी लेकिन जब हम कहते कि नहीं हम गोवा से आए हैं तो उनकी आंखों में एक तरह का आश्चर्य दिखाई देता।

मंदिर परिसर से बाहर निकलते समय हमने कुछ छोटी मोटी खरीददारी की। कई लोगों ने बनारसी साड़ियां खरीदीं। मैंने स्वयं भी भगवान की कुछ तस्वीरें और प्रसाद खरीदा। बनारसी साड़ियां खरीदने के लिए हमारे पास पैसे नहीं थे इसलिए यह तय किया गया। हम साड़ियां पसंद कर कर ले लेंगे और दुकानदार हमारे साथ बाहर आकर हमसे पैसे ले लेगा। किन्तु साड़ियां लेने के बाद हम उन छोटी-तंग भूल-भुलाइयों जैसी गलियों में रास्ता भटक गए और किसी अन्य द्वार से बाहर सड़क पर निकल आए। फिर वापस किसी तर ढूंढते हुये हम वापस मुख्य द्वार तक पहुंचे। उस साड़ी वाले को पैसे दिये और अपना-अपना सामान लेकर रिक्शे में बैठकर भैरवनाथ मंदिर पहुंचे क्योंकि काशी में मान्यता है कि भैरव नाथ के दर्शन के बिना विश्वनाथ दर्शन अधूरा है। अगर बाबा विश्वनाथ यहां के राजा है तो भैरव नाथ जी बाबा विश्वनाथ के कोतवाल। इनके दर्शन के उपरांत ही कोई भी भक्त शिव की कृपा का पात्र बनता है। भैरवबाबा की काशी में विशिष्ट पहचान है। भैरव मंदिर में भी दर्शन के लिए बहुत लंबी कतार थी। किसी तरह हमने मंदिर के दर्शन किए मंदिर के बाहर कई साधु संत और तांत्रिक बैठे हुए थे। जो अपने अपने तरीके से भक्तों को पूजा करने के लिए प्रेरित कर रहे थे इस तरह काशी विश्वनाथ दर्शन सम्पन्न हुआ।

काशी विश्वनाथ दर्शन से मन पुलकित हो उठा था। माथे पर लगा चन्दन का टीका बाबा विश्वनाथ के आशीर्वाद का प्रतीक था। काशी दर्शन के बाद हम बनारस के अन्य मंदिरों के दर्शन के लिए निकले लेकिन उससे पूर्व हम वाराणसी नगर के पूर्व में गंगा तट पर बना रामनगर किला देखने पहुंचे। जो आज ऐतिहासिक संग्रहालय भी है इस किले का निर्माण काशी नरेश राजा बलवंत सिंह ने 18 वीं शताब्दी में किया। था मुगल स्थापत्य शैली में चुनार बलुआ पत्थर से बना इस किले के छज्जे नक्शीदार हैं। किला खुले प्रांगण गुंबददार मंडप से सुसज्जित है ।नदी के किनारे से देखने पर यह और भी सुंदर लगता है। यही हमने बनारस की प्रसिद्ध लस्सी और रबड़ी का भी मजा लिया। एक बात और विशेष यहां जो हमें दिखाई दिए थे की जिस वक्त हम किले के बाहर खड़े थे उसी वक्त वहां से एक शव यात्रा गुजर गई थी और उसमें विशेष बात यह थी की इस शव यात्रा को गाजे-बाजे के साथ ले जाए रहे थे और बीच-बीच में इसे थोड़ी देर के लिए जमीन पर रख देते पूछने पर पता चला यहां के कुछ लोगों की परंपरा है इस तरह हमें एक नई परंपरा को देखने का अवसर मिला क्योंकि इससे पहले शांति से शव यात्रा निकलते हुए हमने बहुत बार देखी थी। इसे देखने के उपरांत हम सकरी गलियों से गुजरते हुए। वहाँ का प्रसिद्ध दुर्गा मंदिर के दर्शन करने पहुंचे।

इस मंदिर की अपनी विशिष्ट पहचान है। यह मंदिर दुर्गा कुंड के नाम से भी प्रसिद्ध है। इस मंदिर की बंगाल की रानी भवानीबाई ने 18वी। शताब्दी में बनवाया था। लाल पत्थरों से बना यह भव्य मंदि 'नागर शैली' में बना है। पास ही

गंगा नदी का तट है। मंदिर के एक तरफ "दुर्गा कुंड" है। पास ही संकटमोचन और मानस मंदिर भी हैं। दुर्गा मंदिर काशी के पुरातन मंदिरों मे से एक है। इस मंदिर का उल्लेख " काशी खंड" मे भी मिलता है मंदिर में माँ दुर्गा "यंत्र" रूप में विरजमान है। इस मंदिर में बाबा भैरोनाथ, लक्ष्मीजी, सरस्वतीजी, एवं माता काली की मूर्ति रूप में अलग से मंदिर है। यहाँ मांगलिक कार्य मुंडन इत्यादि में माँ के दर्शन के लिये आते है। मंदिर के अंदर हवन कुंड है। जहाँ रोज हवन होते हैं। कुछ लोग यहाँ तंत्र पूजा भी करते हैं। जब हम मंदिर में पहुंचे तब भी वहां कई हवन चल रही थी और लोग अपने अपने तरीके से पूजा अर्चना कर रहे थे । उसी समय वहां एक नवविवाहित जोड़ा वहाँ पूजा करने आया। इस तरह विवाह के बाद मंदिर में पूजा करना बहुत शुभ माना जाता है और हमें इस तरह वहाँ की संस्कृति के बारे में और जानने का अवसर मिला।

बीएचयू के कलाभवन में दौरा

इसके बाद हम एक बार फिर बीएचयू परिसर में स्थित भारत कला भवन गए। वहाँ पहुँचकर बनारस की संस्कृति का एक और अध्याय हमारे सामने खुला। भारत कला भवन बनारस की सांस्कृतिक धरोहर का संग्रहालय है। एक ऐसा स्थान जहां न केवल पुरातत्व विभाग की खोजों के नमूने हैं अपितु पुरातन काल की मूर्तियां, ऐतिहासिक झलक वाले चित्र भी यहाँ उपस्थित हैं। बनारस की लोककलाओं की झांकियां। बनारसी चित्रकला का नमूना, काशीनरेश की पोशाख, बनारस के पुराने चित्र, मुग़लों से लेकर आज तक के चित्रा उनके विवरणों के साथ उपस्थित हैं। जिन प्रकार के चित्रों के बारे में सुना था। वे हामरे सामने प्रत्यक्ष रूप से उपस्थित थे। भारत की पुरातन धरोहर का संचयन और कहाँ मिलेगा। प्राचीन काल से लेकर आज तक लोगों के जीवन, रहन-सहन और खान-पान में आए बदलावों का समावेश भी यहाँ किया गया है। इन सब का जायजा लेकर हम बनारस में खरीददारी करने के लिए गोल बाजार पहुंचे।

वहाँ पहुँचकर बनारसा की प्रसिद्ध वस्तुएँ जैसे बनारसी साड़ियां खरीदीं, कुछ मिठाईयाँ खरीदीं, और साथ ही साथ अपनी पूजन सामग्री के लिए प्रसिद्ध बनारस से कुछ पूजा के साहित्य खरीदे। जो गोवा में दुर्लभ हैं। इस तरह शाम को बनारस में घूमते हुए बनारसी चाट का आस्वाद लिया। वहाँ की जिंदगी को बहुत बारीकी से देखा। जिससे एक बार समझ में आई कि यहां के लोगों को चाय के प्रति कुछ विशेष रूचि है। यही कारण है कि यहां रास्ते पर नुक्कड़ पर चाय की दुकान दिखाई दे ही जाती हैं। मुझे तो यहां तक याद आता है कि जिस नाव पर हम नौका विहार कर रहे थे उन्नाव पर भी चाय बेचने वाले आते थे। और अंत में होटल के लिए प्रस्थान किया।

अगली सुबह जल्दी उठाकर फिर बाज़ार गए और बचे हुए सामान को खरीदा क्योंकि दोपहर में दो बजे हमें बस से पटना के लिए प्रस्थान करना था। बाजार में घूमते समय हमारी एक सहपाठी का मोबाइल चोरी हो गया जिससे बनारस का एक अलग रूप सामने आया की भगवान शिव की भक्ति में तल्लीन इस शहर में ऐसे भी लोग बसते हैं जो चोरी-चकारी भी करते हैं। इस दोषारोपण से बनारस भी अछूता नहीं है। इस तरह बनारस की खट्टी-मीठी यादों को अपनी आत्मा में संजोए हमने बनारस शहर को और वहाँ की गलियों और मंदिरों को अलविदा कहा।

बोधगया में बौद्ध तीर्थ स्थलों की यात्रा

पूरे दिन बस से सफर करके जैसे शरीर अकड़ गया था। इसलिए बस से उतरकर हमने एक ढाबे पर खाना खाया। कुछ देर वहीं सुस्ताने के बाद फिर से बस का सफर प्रारम्भ किया। पूरी रात सफर करने के पश्चात सुबह भोर में चार बजे के करीब हम गया पहुंचे। वही पर हाथ-मूंह धोकर हमने रिक्शे से बोध गया मंदिर के लिए प्रस्थान किया।

बोधगया मंदिर या महाबोधि मंदिर बुद्ध के चार महत्वपूर्ण तीर्थ क्षेत्रों में से एक प्रमुख तीर्थ क्षेत्र है। यह स्थल बौद्ध धर्म के अनुयायियों के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। यही कारण है कि देश विदेश से लाखों पर्यटक इस मंदिर में दर्शन करने के लिए पहुंचते हैं इस मंदिर का महत्व इस बात से है कि बोधगया में बोधि पेड़ के नीचे तपस्या कर रहे भगवान गौतम बुद्ध को ज्ञान की प्राप्ति हुई थी। माना जाता है कि सम्राट अशोक ने महाबोधि मन्दिर का निर्माण कराया। कुछ इतिहासकारों का मानना है कि पह्ली शताब्दी में इस मन्दिर का निर्माण कराया गया। यह मंदिर बिहार की राजधानी पटना के दक्षिणपूर्व में लगभग 101 ० किलोमीटर दूर स्थित है। बोधगया गया जिले से सटा एक छोटा शहर है।बिहार में इसे "मंदिरों के

शहर" के नाम से जाना जाता है।

वहाँ पहुँचकर हमने देखा की वहाँ सुबह तड़के भी बहुत भीड़ थी और उनमें ज़्यादातर पर्यटक विदेशी थे। मंदिर के बाहर सुरक्षा का कडा इंतेजाम था। मंदिर में अपना कुछ भी सामान ले जाना वर्जित था। इसके लिए मंदिर प्रशासन द्वारा निशुल्क लोकरों का इंतजाम किया गया है। उन लोकरों में अपना सामान रख हमने सुरक्षा घेरे से निकल कर हमने मंदिर में प्रवेश किया। मंदिर परिसर में लगे फूलों के बगीचे को देख मन आल्हादित हो उठा। रंग-बिरंगे तरह-तरह के छोटे-बड़े सतरंगी फूलों की क्यारीयों से रास्ता सजा हुआ था। मंदिर का बगीचा यहाँ की सुंदरता का एक अलग ही तरीके से बखान कर रहा था। ठंड से शरीर कांप रहा था। वहीं नंगे पैर फर्श पर चलना बर्फ पर चलने के समान लग रहा था। किसी तरह हम मंदिर प्रांगण तक पहुंचे तो वहाँ पहुँचकर मंदिर का जो शोभनीय दृश्य हमारे सामने उपस्थित हुआ। उसका वर्णन शब्दोंमें करना संभव नहीं है।इस मंदिर की बनावट सम्राट अशोक द्वारा स्थापित स्तूप के समान है । बुद्ध भक्त कतारों में फूल फल और वस्त्रों का चढ़ावा लेकर खड़े थे। भक्तों की संख्या इतनी ज्यादा थी कि मूर्ति के ठीक से दर्शन भी नहीं हो पा रहे थे। मंदिर में गौतम बुद्ध की ध्यानमग्न एक विशाल मूर्ती स्थापित थी। उसके आसपास की सजावट जैसे उसकी शोभा और बढ़ा रही थी। विश्वास किया जाता है कि महाबोधि मंदिर में स्थापित बुद्ध की मूर्त्ति का संबंध स्वयं बुद्ध से है। कहा जाता है नालन्दा और विक्रमशिला के मंदिरों में भी इसी मूर्त्ति की प्रतिकृति को स्थापित किया गया है।

मंदिर में दर्शन करने बाद हम बाहर आए। मंदिर की प्रदक्षिणा करते हुए। बोधी वृक्ष के दर्शन किए जिसके नीचे बैठकर भगवान बुद्ध ने तपस्या की थी और उन्हें ज्ञान की प्राप्ती हुई थी। मंदिर के चारों ओर पत्थर की नक्काशीदार रेलिंग बनी हुई है। ये रेलिंग ही बोधगया में प्राप्त सबसे पुराना अवशेष माना जाता है। यहां कुछ बौद्ध भिक्षु बैठकर साधना कर रहे थे मंदिर परिसर के दक्षिण-पूर्व दिशा में प्राकृतिक दृश्यों से समृद्ध एक पार्क है जहां बौद्ध भिक्षु ध्यान साधना करते है। ज्ञान प्राप्ति के बाद बुद्ध ने वहां ७ हफ्ते अलग अलग जगहों पर ध्यान करते हुए बिताए थे और फिर सारनाथ जा कर धर्म का प्रचार शुरू किया। मंदिर की और एक विशेष बात यह थी की यहाँ पर सिर्फ स्थानों का नाम ही नहीं दिया गया था अपितु उन स्थानों की विशेषता के बारे में भी बताया गया था।

मंदिर के पीछे बुद्ध की लाल बलुए पत्थर की 7 फीट ऊंची एक मूर्त्ति है। यह मूर्त्ति विजरासन मुद्रा में है। इस मूर्त्ति के चारों ओर विभिन्न रंगों के पताके लगे हुए हैं जो इस मूर्त्ति को एक विशिष्ट आकर्षण प्रदान करते हैं। इस मूर्त्ति की आगे भूरे पत्थर पर बुद्ध के विशाल पदचिन्ह बने हुए हैं। बुद्ध के इन पदचिन्हों को "धर्मचक्र प्रर्वतन" का प्रतीक माना जाता है। मंदिर को यूनेस्को ने

२००२ में "वर्ल्ड हेरिटेज साइट" घोषित किया था। बुद्ध के ज्ञान प्रप्ति के २५० साल बाद राजा अशोक ने बोधगया में मंदिरों का निर्माण करवाया था। बुद्ध ने ज्ञान प्राप्ति के बाद दूसरा सप्ताह इसी बोधि वृक्ष के आगे खड़ा अवस्था में बिताया था। यहां पर बुद्ध की इस अवस्था में एक मूर्त्ति बनी हुई है। इस मूर्त्ति को "अनिमेश लोचन" कहा जाता है।

मुख्य मंदिर का उत्तरी भाग "चंकामाना नाम" से जाना जाता है। इसी स्थान पर बुद्ध ने ज्ञानप्राप्ति के बाद तीसरा सप्ताह व्यतीत किया था। अब यहां पर काले पत्थर का कमल का फूल बना हुआ है जो बुद्ध का प्रतीक माना जाता है। कई भिक्षुक यहां बैठकर पूजा अर्चना कर रहे थे

महाबोधि मंदिर के उत्तर पशिचम भाग में एक छतविहीन भग्नावशेष है जो "रत्नाघारा" के नाम से जाना जाता है। इसी स्थान पर बुद्ध ने ज्ञान प्राप्ति के बाद चौथा सप्ताह व्यतीत किया था। दन्तकथाओं के अनुसार बुद्ध यहां गहन ध्यान में लीन थे कि उनके शरीर से प्रकाश की एक किरण निकली। प्रकाश की इन्हीं रंगों का उपयोग विभिन्न देशों द्वारा यहां लगे अपने पताके में किया है। माना जाता है कि बुद्ध ने मुख्य मंदिर के उत्तरी दरवाजे से थोड़ी दूर पर स्थित "अजपाला-निग्रोधा वृक्ष" के नीचे ज्ञान प्राप्त के बाद पांचवा सप्ताह व्यतीत किया था। बुद्ध ने छठा सप्ताह महाबोधि मंदिर के दायीं ओर स्थित "मूचालिंडा तलाव" के नजदीक व्यतीत किया था। यह तलाव चारों तरफ से वृक्षों से घिरा हुआ है। इस तलाव के मध्य में बुद्ध की मूर्त्ति स्थापित है। इस मूर्त्ति में एक विशाल सांप बुद्ध की रक्षा कर रहा है। इस मूर्त्ति के संबंध में एक दंतकथा प्रचलित है। इस कथा के अनुसार बुद्ध प्रार्थना में इतने तल्लीन थे कि उन्हें आंधी आने का ध्यान नहीं रहा। बुद्ध जब मूसलाधार बारिश में फंस गए तो सांपों का राजा मूचालिंडा अपने निवास से बाहर आया और बुद्ध की रक्षा की। इन सब बातों की जानकारी हमें वहां उपस्थित शिलालेखों से मिली।

इस मंदिर परिसर के दक्षिण-पूर्व में "राजयातना वृक्ष" है। बुद्ध ने ज्ञान प्राप्ति के बाद अपना सांतवा सप्ताह इसी वृक्ष के नीचे व्यतीत किया था। यहीं बुद्ध दो बर्मी व्यापारियों से मिले थे। इन व्यापारियों ने बुद्ध से आश्रय की प्रार्थना की। इन प्रार्थना के रूप में "बुद्धमं शरणम गच्छामि" अर्थात "मैं स्वयं को भगवान बुद्ध की शरण में सौंपता हूं" का उच्चारण किया। इसी के बाद से यह प्रार्थना प्रसिद्ध हो गई। आज भी जब हम उस मंदिर में गए तो यह प्रार्थना बार -बार हमें सुनाई दे रही थी। मंदिर में एक अलग ही प्रकार की शांति थी। शायद मंदिर में कोई कार्यक्रम चल रहा था इसी कारण मंदिर को दीपक को दीपको और पुष्पों से सजाया गया था। जो मंदिर की शोभा को और भी बढ़ा रहा था।

आज हम सब उन स्थानों के साक्षी बन रहे थे जिनके बारे में हमने जातक कथाओं में पढ़ा था या फिर कहीं

किसी से सुना था। हर धर्म की अपनी विशेषता होती है और पूजा पाठ की अपनी शैली होती है। उसी के अनुसार उस मंदिर में ना जाने कितने ही बुद्ध भिक्षुक की पोशाक धारण किए हुए थे। जिनमें अधेड़ उम्र से लेकर छोटी उम्र के बच्चे भी शामिल थे। किसी विशिष्ट शैली में भगवान बुद्ध का नाम स्मरण कर रहे थे यह सब देख कर बहुत आश्चर्य हुआ इस मंदिर की सुंदरता और विशालता शब्दों में बयान करना शायद इस मंदिर और परिसर के साथ नाइंसाफी होगी क्योंकि इसे महसूस किया जा सकता है। बुद्ध धर्म इसी मंदिर से पूरे विश्व में फैला है। यही कारण है कि यहां सिर्फ भारतीय भक्तों के साथ विदेशी भक्तों का भी ताता लगा हुआ था। इस मंदिर में साफ सफाई का बहुत ध्यान रखा जाता है और भगवान के दर्शन भी बहुत ही अनुशासन और शांति से किए जाते है। महाबोधि मंदिर के पास जगन्नाथ मंदिर स्थित है जहां पुरी के जगन्नाथ भगवान की मूर्तियों की प्रतिमूर्तियां स्थापित है और साथ ही राम लक्ष्मण सीता की भी मूर्तियां है । महाबोधि मंदिर के बाद हमने इसी जगन्नाथ मंदिर दर्शन किए।

मंदिरों के शहर में मुख्य महाबोधि मंदिर के दर्शन के बाद वहां उपस्थित अन्य बुद्ध मंदिरों में भी दर्शन करने पहुंचे। बोधगया की एक विशिष्टता यह भी है कि बुद्ध धर्म जिन देशों में भी फैला उन सभी देशों के भक्तों यहां आकर अपनी वास्तु शैली के अनुसार यहां मंदिरों का निर्माण किया हुआ है। जो अपने आप में बहुत ही अलग तरह का अनुभव है। हमने इन सभी मंदिरों की दर्शन किए और उस वास्तुकला को बहुत बारीकी से देखा और परखा।

महाबोधि मंदिर के बाद हम तिब्बतियन मठ पहुंचे जो बोधगया का सबसे बड़ा और पुराना मठ है जिसका निर्माण 1934 ई० में किया गया था। बर्मी विहार 1936 ई० में बना था। इस विहार में दो प्रार्थना कक्ष है। इसके अलावा इसमें बुद्ध की एक विशाल प्रतिमा भी है। इसी के पास थाई मठ भी है । इस मठ के छत की सोने से कलई की गई है। इस कारण इसे "गोल्डेन मठ" कहा जाता है। इस मठ की स्थापना थाईलैंड के राजपरिवार ने बौद्ध की स्थापना के 2500 वर्ष पूरा होने के उपलक्ष्य में किया था।

चीनी मंदिर महाबोधि मंदिर परिसर के पशिचम में पांच मिनट की पैदल दूरी पर स्थित है। इस मंदिर में सोने की बनी बुद्ध की एक प्रतिमा स्थापित है। इस मंदिर का पुनर्निर्माण 1997 ई० किया गया था। जापानी मंदिर के उत्तर में भूटानी मठ स्थित है। इस मठ की दीवारों पर नक्काशी का बेहतरीन काम किया गया है। यहां सबसे नया बना मंदिर वियतनामी मंदिर है। यह मंदिर महाबोधि मंदिर के थोड़ी ही दूरी पर स्थित है। इस मंदिर का निर्माण 2002 ई० में किया गया है। इस मंदिर में बुद्ध के शांति के अवतार अवलोकितेश्वर की मूर्त्ति स्थापित है। बोधगया में जैसे बुद्ध मंदिरों की एक लंबी कतार सी है और इन सभी मंदिरों की अपनी एक अलग पहचान और विशेषता है। इन सभी मठों में उन उन देशों के अन्याय आज भी निवास करते हैं।

बोधगया दर्शन के बाद गया के अन्य स्थानों के दर्शन के लिए पहुंचे क्योंकि गया ना सिर्फ बुद्ध धर्म में अपितु हिंदू धर्म में भी उतना ही महत्वपूर्ण माना जाता है। गया धाम को हिंदुओं में एक पवित्र तीर्थ स्थल के रूप में माना जाता है और विशिष्ट रूप से पिंडदान करने के लिए गया बहुत महत्वपूर्ण है क्योंकि इसका उल्लेख महाभारत, रामायण में मिलता है। इसे "मृत आत्माओं की मुक्ति का धाम" कहा जाता है।

गया धाम के मंदिरों की सैर

गया धाम में हम सर्वप्रथम सीता कुंड पहुंचे। माना जाता है यहां देवी सीता ने महाराज दशरथ का पिंडदान किया था। यहीं पर जानकी बाग स्थित है यहीं से कुछ दूरी पर अक्षय वट जिसे सीता द्वारा अमृता का वरदान प्राप्त है। सीता कुंड के दर्शन के उपरांत हम गया में एक महत्वपूर्ण तीर्थ क्षेत्र विष्णुपद मंदिर पहुंचे। पिंडदान करने के लिए यह सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। इस मंदिर का महत्व अपनी श्राद्ध विधियों के लिए है। यहीं पर धर्मशिला पर पैर रख विष्णु ने गयासुर को मोक्ष प्रदान किया था। यही कारण है इस जिले का नाम गया है। यहां साल के 12 महीने श्राद्ध विधि चलती है। पूरे भारत से लोग यहां आकर अपने पितरों का पिंडदान और श्राद्ध करते हैं।

फल्गु नदी के तीर पर स्थित विष्णुपद मंदिर का निर्माण 1780 ईस्वी लगभग अहिल्याबाई होल्कर द्वारा माना जाता है यह सभी तीर्थों का संगम यह माना जाता है पितरों को यहां मोक्ष प्राप्त होता है जब हम इस मंदिर में पहुंचे तब भी मंदिर में कई भक्त यहां पिंडदान और श्राद्ध की विधियां कर रहे थे। यहां विष्णु का पश्चिम आज भी मौजूद हमने उसके दर्शन की यहां की एक बात और याद आई पंडित भक्तों को बुला बुला कर गर्भ ग्रह में जाने का निवेदन करते और फिर बिना किसी पूजा विधि किए हुए ही दान और दक्षिणा की मांग करते। इस बात से थोड़ा सा दुख हुआ इन लोगों ने धर्म अध्यात्म और श्रद्धा को भी पैसों से जोड़ कर रखा हुआ है।

साथ ही गोवा विश्वविद्यालय से जुड़ा अपना एक अनुभव भी सांझा

विष्णुपद मंदिर के उपरांत हम गया के मंगला गौरी शक्तिपीठ पहुंचे। मंगला गौरी शक्तिपीठ मंदिर में से एक महत्वपूर्ण शक्तिपीठ माना जाता है। कामाख्या शक्तिपीठ के बाद एक प्रमुख मंदिर है। मंगला गौरी शक्ति पीठ। यहां के पुजारी से बात करने पर पता चला कि इस स्थान की महत्ता इसलिए है क्योंकि शिव की पत्नी सती का स्तन मंडल यहां पर आकर गिरा था। और आज उसी स्थान पर इस मंदिर की स्थापना की गई है। जहां हजारों भक्तों मन्नत मांगते हैं। भक्तों से बात करने के पर पता चला कि यहां मांगी हुई मन्नत जरूर पूरी होती है। मंदिर में भक्तों की भारी भीड़ थी और उसमें भी अधिकांश स्त्रियां ही थी। जो देवी को सुहाग का सामान चढ़ाकर उनका पूजन करती है। हमारी विभाग अध्यक्ष वृषाली मैम ने भी देवी की पूजा

अर्चना की। शक्तिपीठ का मुख्य मंदिर सभामंडप शैली में है और उसका प्रवेश द्वार भी छोटा ही है। भक्तों को झुककर उसमें प्रवेश करना पड़ता है। इस मंदिर में प्रकाश का कोई स्रोत नहीं है। जब हमने पुजारी जी से इसका कारण पूछा। तो उनसे ज्ञात हुआ शक्तिपीठ में कोई भी रोशनी नहीं की जाती। रोशनी सिर्फ एक अखंड दिया वहां आठों प्रहर जलते रहता है। मुख्य मंदिर के पास ही गणपति का मंदिर भी है और सामने ही मौली वृक्ष। जिस पर लाल पीले रंग की बहुत सारी मौलिया बंधी हुई थी। भक्त यहां मौली बांधकर अपनी मन्नत मांगते हैं। इस मंदिर की एक खास बात यह भी है कि मनुष्य जीवित रहते हुए ही अपना पिंड दान यहां कर सकता है।

यात्रा के अंतिम पड़ाव में हम उस स्थल की यात्रा के लिए जो ना सिर्फ भारत में अपितु पूरे विश्व में प्रसिद्ध है और भारत की संस्कृति शैक्षणिक एवं साहित्य धरोहर में एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है नालंदा विश्वविद्यालय। परंतु उससे पूर्व हमने एक होटल में भोजन किया और अगले पड़ाव की ओर बस से यात्रा करने लगे।

<u>नालंदा विश्वविद्यालय की सैर</u>

शाम को लगभग **5:00** बजे नालंदा पहुंचे। वहां पर मिले गाइड से हमें नालंदा घूमने में बहुत मदद मिली क्योंकि उसने हमें उस विश्वविद्यालय के बारे में बहुत कुछ ऐसी जानकारियां दी। जो बिना गाइड के हमें ना मालूम होती। नालंदा विश्वविद्यालय विश्व के सबसे पहले आवासीय विश्वविद्यालय में से एक माना जाता है। जिसकी मुख्य इमारत कैसी थी इसके बारे में कोई पूर्ण रूप से नहीं कह सकता किंतु आज **14** हेक्टर में इसके अवशेष मिलते हैं। जो लाल पत्थरों से बने हुए हैं। पुरातत्व विभाग की खुदाई में मिले अवशेषों के आधार पर और चीनी यात्री व्हेन के पुस्तकों से आधार पर इसके बारे में जानकारी प्राप्त हुई है। क्योंकि सातवीं शताब्दी में वह भी इस विश्वविद्यालय का छात्र रह चुका था। इस विश्वविद्यालय की स्थापना का श्रेय गुप्त शासक कुमारगुप्त को दिया जाता है। गाइड के द्वारा हमें पता चला इस विश्वविद्यालय की मुख्य मार्ग बिहार एक कई मंजिला थी जो अब **2** मंजिला इमारत ही शेष है। जहां बैठकर प्राध्यापक विद्यार्थियों को व्याख्यान दिया करते थे। शिक्षक का आसन पूजा हुआ करता था और उसके सामने विद्यार्थियों के बैठने की सुविधा बुआ का जिसके अवशेष आज भी दिखाई देते हैं। यहां लगभग **10,000** विद्यार्थी और **3000** शिक्षक हुआ करते थे और व्याकरण दर्शनशास्त्र योगशास्त्र शिल्प विद्या खगोल शास्त्र इत्यादि विषयों की स्नातक स्तर की शिक्षा यहां दी जाती थी। विद्यार्थियों का प्रवेश **3** प्रवेश परीक्षाओं द्वारा दिया जाता था और उनके रहने खाने का निशुल्क प्रबंध इसी विश्वविद्यालय द्वारा किया जाता था। गुप्त वंश के द्वारा विश्वविद्यालय

को 200 गांव दिए गए थे। जिनके कर से इस विश्वविद्यालय के खर्च का सारा प्रबंध किया जाता था। विश्वविद्यालय में ही छात्रावास भी है। जहां विद्यार्थियों के रहने और खाने की व्यवस्था होती थी।हर छात्रावास के कमरे में एक कमरे में 2 विद्यार्थी रहने के अवशेष मिलते हैं। अब तक की खोज में लगभग 300 कमरे में ले हमने देखा कमरों की दीवारों में कुछ आले जैसे बने हैं। गाइड ने हमें बताया कि पुस्तकें और दीपक रखने के लिए होते थे। छात्रों के छात्र संघ हुआ करते थे जिनका मुखिया हुई छात्र ही हुआ करता था और तो और शिक्षकों की भी तीन श्रेणियां हुआ करते थे पुणे। यहां शिक्षा मौखिक व्याख्यान द्वारा, पुस्तकों की व्याख्या या शंका निवारण द्वारा दी जाती थी। जहां आचार्य बैठकर अपने शिष्यों के सवालों के जवाब दिया करते थे।

नालंदा विश्वविद्यालय स्थापत्य कला का एक ऐसा नमूना है जो पुरातन कालीन भारतीय इमारतों की बनावट का अद्भुत नमूना पेश करता है। विश्वविद्यालय का परिसर दीवारों से घिरा हुआ है। इस विश्वविद्यालय के उत्तर दक्षिण में मठों की कतार है। विश्वविद्यालय में बहुत से प्रार्थनालय हुआ करते थे। जहां बैठकर आचार्य अपने शिष्यों को अध्यात्म का ज्ञान दिया करते थे। एक छोटा प्रार्थनालय होने का अवशेष आज भी मौजूद है। जहां भगवान बुद्ध की प्रतिमा आज भी मौजूद है। उनके सामने भव्य स्तूप और मंदिर है। पुरातत्व विभाग की खुदाई में मिली अवशेषों के आधार पर यह माना जाता है कि विश्वविद्यालय के मुख्य द्वार पर विद्वानों के नाम श्वेत अक्षरों में लिखे जाते थे। आज यूनेस्को द्वारा इसे विश्व धरोहर की ख्याति प्राप्त हुई है। विश्वविद्यालय में एक विशाल 9 मंजिला पुस्तकालय होने का भी उल्लेख कई पुस्तकों में मिलता है। जहां 3 लाख से अधिक पुस्तके हुआ करती थी। पुस्तकालय गुस्सा होने का अवशेष आज भी दिखाई देते हैं परंतु उन पुस्तकों का क्या हुआ इसके बारे में कोई जानकारी प्राप्त नहीं होती। यहां अनेक विदेशी शासकों का आक्रमण हुआ। जिन्होंने इस विश्वविद्यालय को क्षति पहुंचाने का बहुत प्रयास किया। यही कारण है कि आज हमें इस विश्वविद्यालय के बारे में पूर्ण रूप से जानकारी नहीं मिलती परंतु इतना जरूर कहा जा सकता है कि पुरातन काल में भी शिक्षण की इतनी अच्छी व्यवस्था का एक बेहतरीन उदाहरण है जहां हर काम बहुत ही योजनाबद्ध तरीके से दिखाई देता है। भारत की इस सांस्कृतिक और शैक्षणिक धरोहर को देखकर भारत के प्रति गर्व महसूस किया।

इस महान विश्वविद्यालय के दर्शन के उपरांत हम पटना की तरफ आगे बढ़े। इन सबके बीच रात की लगभग 8:00 बज चुके थे उसी बीच हमें मालूम हुआ जिस होटल में हमने बुकिंग की थी उसमें कुछ समस्या हो गई। जिसके कारण हमें बहुत अव्यवस्था हुई परंतु जल्दी हमने किसी तरह दूसरे होटल का प्रबंध किया और हम उस होटल में जा पहुंचे।

पटना पहुंचते-पहुंचते हमें रात के 12:00 बज चुके थे। वहां पहुंचकर सब अपने अपने कमरे में जाकर सो गए।

पटना से गोवा के लिए प्रस्थान

अगले दिन हमारी यात्रा का अंतिम दिन था क्योंकि पटना से ही हम वास्को-पटना एक्सप्रेस लेकर गोवा के लिए रवाना होने वाले थे। उससे पहले सुबह जल्दी उठकर हमने थोड़ी बहुत पटना की सैर करने की ठानी। इसके लिए हम सुबह पटना की सड़कों पर निकल पड़े और थोड़े बहुत पटना शहर को देख और समझा। वही मैंने पटना के मशहूर लिट्टी चोखा का आस्वाद लिया। थोड़ी बहुत मिठाइयां करेगी और फिर वापस होटल के लिए रवाना हुए। होटल पहुंचकर अपना सामान उठाया और रेलवे स्टेशन पहुंच गए । दोपहर 2:00 बजे हम वास्को-पटना एक्सप्रेस में बैठकर गोवा वापस आने के लिए यात्रा प्रारंभ की।

वही रेल थी, रेल का सफर भी वहीं था लेकिन अब मन का उत्साह खत्म हो चुका था क्योंकि हमने अपनी यात्रा पूरी कर ली थी। एक बात का संतोष मन में जरूर था कि इस यात्रा के माध्यम से हमें हमने अपनी मस्तिष्क में कुछ ऐसे स्मृतियों को और दृश्य को इकट्ठा कर लिया था। जो जीवन भर हमें याद रहेंगे। जाते समय तो हमारे पास सिर्फ अपनी सामान का खजाना था लेकिन अब हमारे पास उन सारी सतरंगी यादों का भी खजाना हो गया था। जिसे लेकर हम वापस अपने घर पहुंचने वाले थे। इसी बीच रात में सोते वक्त हमारे प्राध्यापक दीपक बरक का मोबाइल चोरी हो गया। यात्रा के खत्म होने तक शायद दुखद अनुभव भी हमें अपने साथ लेकर ही जाना था। दो दिन की थकान भरी यात्रा करके हम 17 फरवरी रविवार सुबह 8:00 बजे के करीब गोवा में पहुंच गए थे। हमारी यात्रा समाप्त हुई।

अंत में

हिंदी प्रदेशों में भ्रमण इस विषय के अंतर्गत की गई हमारी शैक्षणिक यात्रा बहुत ही सफल मानी जा सकती है। क्योंकि इस यात्रा के अंतर्गत मुझे कुछ ऐसे अनुभव आए। जिन्हें शायद मैं अन्य यात्राओं में अनुभव नहीं कर सकती थी। बनारस घूमने की दृष्टि से नहींअपितु कुछ सीखने की दृष्टि से भी यह एक अलग प्रयास था। जिन स्थानों पर लोग हमेशा घूमने के लिए जाते हैं। उसके अतिरिक्त भी हम साहित्य से जुड़े हुए महान विभूतियों के गांव पहुंचे। जहां शायद ही कोई यात्री जाना पसंद करें।साहित्यकारों की जीवन और उनके गांव के बारे में बहुत विस्तार से जानने का और समझने का अवसर मिला। चीन के बारे में अब तक हम सिर्फ पुस्तकों में पढ़ते आए थे। ना सिर्फ घूमने की दृष्टि से अपितु कुछ सीखने की दृष्टि से भी बहुत ही सफल प्रयोग रहा। जिसके माध्यम से ना सिर्फ मैंने यात्रा में आने वाली कठिनाइयों को अनुभव किया अपितु उन कठिनाइयों से किस प्रकार से सामना करते हुए अपनी यात्रा को यशस्वी बनाने का प्रयास किया जाए यह भी सीखा।

बनारस की गलियों में घूमते हुए न सिर्फ बनारस का खानपान, वहां का रहन सहन, वहां की भाषा को भी बारीकी से समझने का अवसर मिला।खड़ी बोली हिंदी की भोजपुरी शाखा बोलने वाले लोग जब हिंदी बोलते हैं। तब उनमें भी बिना तालमेल के भोजपुरी शब्दों का प्रयोग करते हैं। जैसे कि हमारे होटल के मैनेजर हिंदी बोलते वक्त की हर शब्द में 'वा' का प्रयोग करते थे। जैसे टेबल बा फोनवा आदि। इसी के साथ साथ हिंदी बोलते हुए भी वह कई अन्य ऐसे प्रयोग करते जिन्हें हमें समझना मुश्किल हो जाता है। जैसे सुबह के लिए भोर कल के लिए बिहान शब्द का प्रयोग करते हैं।

इसके अलावा बनारस की संस्कृति को बारीकी से समझने का अवसर हमें इसी शैक्षणिक यात्रा के अंतर्गत मिला। हमें जाना कि बनारस की सकरी गलियों में किस प्रकार से लोग कहीं से भी गाड़ी को घुमा कर निकाल ले जाते हैं। जो किसी चुनौती से कम नहीं है और बनारस की गलियों में जानवर और इंसान एक साथ इस प्रकार होते हैं। जैसे एक दूसरे के अस्तित्व से उन्हें कोई फर्क ही नहीं पड़ता एक तरफ गाय और दूसरी तरफ इंसान चलते हुए आसानी से देखा जा सकता है। एक दूसरे को कोई परेशान नहीं करता ना किसी के रास्ते में आते हैं और ना कोई इंसान ही उसे परेशान करता। बनारस से अध्यात्म की नगरी मानी जाती है यही कारण है कि बात-बात पर यहां के लोगों की मुंह में गंगा मैया और बाबा विश्वनाथ का नाम आ ही जाता है। परंतु अध्यात्म की इस नगरी में कुछ ऐसे भी लोग हैं जो अनजान लोगों का आर्थिक रूप से शोषण करने में भी नहीं हिचकते। जैसे हमारे गाड़ी चलाने वाले ड्राइवर का व्यवहार उतना अच्छा नहीं था और ना ही उसने हमें बनारस घुमाने में कोई खास मदद की। हम उस देश से अनजान थे इसलिए उनसे कुछ भी पूछने पर वह हमसे बहस करने लगे इस तरह एक थोड़ा सा कड़वा अनुभव मिला।

बनारस की कुल्हड़ की चाय हो, या लस्सी और रबड़ी सबका अपना एक अलग स्वाद था। इस तरह बनारस की खाद्य संस्कृती से भी हमें रूबरू होने का अवसर मिला। बनारस के मशहूर बनारसी पान का स्वाद लेने का अवसर

मिला। इतना ही नहीं यात्रा करते समय अपने सहपाठियों से मिले अनुभव भी जीवन के लिए बहुत उपयोगी होंगे । कई कटु अनुभव या कुछ मीठी यादें। इस यात्रा में कुछ मित्र भी बनाए, तो कुछ पुराने मित्रों को के साथ संबंधों में खटास भी आई । यात्रा के दौरान ही हमें अपने विभाग अध्यक्ष और अन्य प्राध्यापकों की जीवन शैली और उनके व्यवहार हो बारीकी से देखने का अवसर मिला शिक्षक के तौर पर तो वे हमेशा ही हमारे साथ रहते हैं परंतु एक एक इंसान के रूप में उनके व्यक्तित्व को जानने का हमें अवसर मिला और उनसे अपने संबंध सुधारने का भी एक सुनहरा मौका था। इस यात्रा में एकता का अनुभव भी मिला और कुछ खट्टी मीठी खटास भरी नोकझोंक भी जो शायद हर यात्रा में होता होगा लेकिन यह सभी बातें आज के उपरांत भी हमेशा मस्तिष्क में स्मृति बनकर रह जाएंगी।

यात्रा इसलिए भी खास थी क्योंकि इस यात्रा में ना सिर्फ हमें बनारस शहर को जाने का अवसर मिला बल्कि गया और पटना शहर को भी हमने बहुत अच्छी तरह से घूमा पुणे राम इस यात्रा के माध्यम से हमें हिंदू धर्म और बौद्ध धर्म से जुड़े कई बार कई बातों के बारे में बहुत बारीकी से समझने का मौका मिला बौद्ध धर्म और उससे जुड़ी मान्यताएं उनकी पूजा विधि को समझने का एक बहुत स्वर्ण अवसर था। क्या कहा जा सकता है यह है आपका उस फूलों की टोकरी के समान है जिसमें विविध रंग के फूल होते हैं। उसी प्रकार हमारी इन यादों की टोकरी में बहुत सी सतरंगी अनुभव भरे पड़े हैं। जिनका हमें भविष्य में बहुत उपयोग होगा और विश्वविद्यालय जीवन में की गई इस यात्रा को मैं जीवन भर नहीं भूल सकूंगी। इस सब के लिए मैं अपने विश्वविद्यालय और प्राध्यापकों के प्रति कृतज्ञ हूं।